

जो यह कथा सनेह समेता ।
पढ़िहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता ॥
हुइहैं चोंच चरन अनुरागी ॥
सब गुन करन चोंच गुण भागी ॥

प्रकाशक—

दीक्षित ब्रादर्स

चोंच महाकाव्य

संशोधित, परिवर्धित, सचित्र संस्करण

(शुद्ध स्टुडेण्ड लैंग्वेज का एक गद्य-पद्यमय काव्य)

'Laugh when I laugh, I seek no other fame'

—Byron.

BY

Mr. X. Y. Z.

प्रकाशक

साहित्य कार्यालय, प्रयाग ।

द्वितीय बार] सन् १६२७ [मूल्य छः आना

प्रकाशक—
सिद्धिनाथ दीक्षित
साहित्य कार्यालय
दारागंज, प्रयाग



मुद्रक—
बद्रीप्रसाद पाण्डेय,
नारायण प्रेस,
प्रयाग

पाठकों से

—:०:—

आपके सामने यह पुस्तक उपस्थित है। यह उस समय के लिये है जब आपको light literature पढ़ने की इच्छा हो। इस पुस्तक में किसी व्यक्ति विशेष के ऊपर कटाक्ष नहीं किये गये—अतएव यदि किसी का वर्णन या नाम इस पुस्तक में उल्लिखित किसी वर्णन या किसी नाम से मिलता हो तो क्षमा करें।

इस पुस्तक का प्रथम संस्करण शीघ्र ही समाप्त हो गया था। जिससे पता लगता है कि पाठकों को इससे अच्छा मनोविनोद हुआ। लोगों के बहुत आग्रह करने और कुछ प्रकाशकों के अधिकार मांगने पर इसका द्वितीय संस्करण परिवर्द्धित और संशोधित रूप में किया गया है। इस संस्करण में पुस्तक का अन्तिम भाग सामयिक पत्रों से उद्धृत किया गया है। अतएव श्रीकृष्ण सन्देश, गढ़वाली और हिन्दूपंच आदि पत्रों तथा उनके मूल लेखकों का मैं कृतज्ञ हूं। पहले की अपेक्षा इस बार सचित्र करने और छपाई सफाई पर प्रकाशक ने विशेष ध्यान रखा है। अतएव आशा है इससे अब आपका पहले से भी अधिक मनोरञ्जन होगा।

यदि कोई महाशय इस पुस्तक की समालोचना Criticism मेरे पास भेजना चाहें—या इसकी कोई गलतियां बतलाना चाहें, तो उनसे निवेदन है कि वे उन्हें प्रकाशक के पास भेज दें। लेखक को वहां से मिल जायँगी।

लेखक।

BEWARE!

दिशि कुञ्जरहु कमठ अहि कोला ।
धरहु धरिणि धरि धीर न डोला ॥
लिखन चहत मैं चोंच पुराना ।
पर फटकारहु, खोलहु काना ॥

स्थान नामालूम

(यहां, वहां और सब जहां)

स्वामी गड़बड़ानन्द—मिस्टर चोंच, आपने यह किताब देखी ?

मि० चों०—कौन किताब स्वामी जी !

स्वा० ग०—यही, I mean—Twentieth Century की Great Epic.

मि० चों०—इसका नाम क्या है ?

स्वा० ग०—चोंच महाकाव्य ।

मि० चों०—यह किस लैंग्वेज में है ?

स्वा० ग०—किस में बतलाऊँ ? न तो हिन्दी में है और न उर्दू में और न अंग्रेज़ी में ।

मि० चों०—आख़िर कुछ तो बतलाइए ।

स्वा० ग०—बतलाऊँ क्या ? Student language में है यानी इन तीनों की खिचड़ी में हैं ।

मि० चों०—इसमें क्या सब्जेक्ट deal किया गया है ?

स्वा० ग०—वही जो ऐसी किताब में होना चाहिये ।

मि० चों०—इसकी क़ीमत क्या है ?

स्वा० ग०—Chonch Editon (In white ink on white paper or in a black ink on black paper) £ 20 15 s. 6 d. १५ डालर, ६ शिलिङ्ग, ३ मार्क, २ फ्रैंक, १ पेन, ।≈) आना १३ पाई ।

Popular Edition -/6/- Postage extra.

Unpopular Edition-does not exist.

College edition, Hostel edition, School edition, Teacher edition, student edition Etc. in contemplation, apply in anticipation.

प्रिफ़ेस

—:o:—

आज जहां देखिये वहीं 'चोंच' का चर्चा है। जहां चार चतुरों के चरन पड़े वहीं चोंच भी पहुंचे, स्कूलों में, कालिजों में, होस्टलों—और कहाँ नहीं-ये मौजूद हैं। इनका सम्प्रदाय टीड़ी दल की तरह बढ़ रहा है, सो इन्हीं चोंच महाराज के पंजों के नखों की रज के कणों की कृपा से मैंने यह महाकाव्य लिखा है। थोड़े ही को बहुत समझिये। भला मैं इनकी क्या तारीफ़ कर सकता हूं:—

कवि न होहुं नहिं चतुर कहाऊँ।
मति अनुरूप चोंच गुण गाऊँ॥

हालाँ कि यह 'महाकाव्य' है और inspired है, पर भला क्या कभी भी चोंच महाराज की बड़ाई की जा सकती है:—

कहों कहाँ लगि चोंच बड़ाई।
चोंच न सकहिं चोंच गुण गाई॥

॥ श्रीः ॥

समर्पण

जो शुष्क और नीरस साहित्य से उकता गये हों, जिनको
कालेज और स्कूल की स्टडी ने परेशान कर दिया हो,
जिनके मन को शारीरिक और मानसिक परिश्रम
एवं व्यथाओं ने व्यथित कर रखा हो, जिन्होंने
होली सरीखे विनोदमय अवसरों में उदा-
सीनता रखने की शपथ खा ली हो,
और जिनका जन्म मोहर्रम तथा
पितृपक्ष में न हुआ हो, उन्हीं
के कठोर करों में महाकाव्य
का यह कलित कलेवर
सादर
समर्पित है।

लेखक



श्रीचंचुशेखरायनमः

श्री चोंच महाकाव्य

चोंच महात्म्य

फटकार ले पर लेखनी ! लिखनी है कहानी,
लिखने में न हो जाय कहीं जिसके दिवानी।
दावात दिवाला न कहीं अपना निकाले,
कागज़ नहीं फट जाय रहे होश सँभाले॥
मैं मानता हूं, हूं न मैं इस योग्य तनिक भी,
कीरत तुम्हारी गाना है नहिं बाल तनिक सी।
लिखने में स्वयं हाथ जिसके चोंच बना है,
महिमा तुम्हारी चोंच ! सवालाख गुना है।
है जीभ फटी जिसकी वो क्या हाल लिखेगी,
गो 'स्वान' है, पर वह भी हो बेहाल मरेगी।
मति मन्द, दृष्टि मन्द, सभी भाँति से मैं मन्द,
मुश्किल है समझ जाना तुम्हारे सभी फरफन्द।
पर आपके पंजों की अगर मुझपे कृपा हो,
मैं वह भी लिखूँ जो विरंचि भूल गया हो॥
हे चोंच महाराज ! नमस्कार नमस्कार,
सौ या कि सवासौ नहीं पर लाख नमस्कार,

है अक़्ल तो छोटी मेरी पर देख तुम्हारा,
बढ़ता हुआ यह तेज चकाचौंध का मारा।
खुलती नहीं आँखें हैं तुम्हीं बस हो सहारा,
वरदान दो कि गाके कहूँ हाल तुम्हारा।
रज जो मिले पंजों के नखों की कहीं मुझको,
करदूँ तो मैं मशहूर सब संसार में तुमको॥

सुनना लगा के कान सभी चोंच हमारे,
कहूँ उनकी कहानी हैं जो गुरुराज तुम्हारे।
तुम जानते हो यह कि बड़े वे कुलीन हैं,
इतिहास पुराने, नहीं उनके नवीन हैं।
श्री काकभुशुण्डी का कभी नाम सुना है,
भक्तों में जिन्हें हिन्दी के कविवर ने गिना है।
सच पूछो तो मानस है उन्हीं काक का गाया,
संसार को जो आज है इस तौर से भाया।
मरते नहीं वे हैं कभी-पर है न ठिकाना,
जाना यही हमने कि उन्हें कुछ भी न जाना।
जो उनके नहीं चोंच थी, तो चोंच थी किनके,
कहता इसे हिसाब लगा, सोच के, गिन के।
पर चोंच के कहने से न मतलब है कुछ उनसे,
होंगे कहीं ज़रूर ही, पर दूर ही हमसे॥

पर चोंच महाराज का है ढङ्ग निराला,
वे सब में हैं,-उनका न है मन्दिर न शिवाला।
बाज़ों में कला चार हैं बाज़ों में हैं सोला,
बाज़ों में हैं चौबीस कला का अकेला॥

फिर चोंच का परताप कहाँ तक मैं सुनाऊँ,
छोटी सी ज़िन्दगी में नहीं पार मैं पाऊँ।

दुनिया को किया और बनाया है जिन्होंने,
मालूम है चढ़ने को चुना किसको उन्होंने ?
बाबा॰ मज़ाक करते हैं ऐसा न समझना,
दाढ़ी सफ़ेद मूछ पर तुम कुछ न बिगड़ना।
इक चोंचा† ही नायाब बनाई है सवारी,
जिसने कि सफ़ेदी की सफ़ेदी है सँवारी।
फिर उसका हवाला मुझे देना है ज़रूरी,
भक्तों की मनोकामना की जिसने है पूरी।
छोड़ी नहीं है बात कभी जिसने अधूरी,
फिर देखिए उसने भी सवारी है क्या ढूँढ़ी।
चोंचों में चोंच, चोंच-शिरोमणि महाराजा,
उसने किया पसन्द, गरुड़ पै वो विराजा।
इससे नज़ीर साफ़ है देवों के वो प्यारे,
कार्तिक से हज़ारों ही हैं मौजूद हवाले।
जिसने न किया चोंच का वाहन वही१ भूला,
ला भस्म अङ्ग, बीच चिता के वही झूला।
लेना न समझ देवता ही करते दया हैं,
और चोंच पर देवी की नहीं मोह मया है।
वीणा लिये पुस्तक लिए, माला लिए कर में,
उसने२ भी चुना चोंच निराला जगत भर में॥
अौ आप समझते हैं कि क्या उसका हाल है,
जिस पर जगत सभी अजी निशिदिन निहाल है।
लक्ष्मी–वही लक्ष्मी जो है धन धान की माता,
चाँदी के गोल गोल उन कलदार की माता।

॰ ब्रह्मा जी। † हंस। १ महादेव जी। २ सरस्वती जी।

वो भी उसी चौंच पै करती है सवारी,
कहते जिसे उलूक१ हैं, जो रात्रि विहारी।
हिन्दोस्ताँ की लक्ष्मी चढ़ती उलूक पर,
यह कह चुके हैं चौंच बहुत सोच समझ कर॥
और बढ़ाना है अब तकरार मचाना,
है चौंच का रुतबा बड़ा यह सबने है जाना।
पर चौंच महाराज के भी भेद बहुत हैं,
हैं बस कुलीन तीन सभी और व्यर्थ हैं।
वैसे तो गजालीस हैं पर ये महा कुलीन—,
बक, काक, निशानाथ, शेष जानिए कमीन।
अतएव इन्हीं तीन को फिर से है नमस्कार,
दो चार नहीं बल्कि सवा लाख नमस्कार॥

प्रोफ़ेसर चौंच

:o:

जब कभी प्रोफ़ेसर भी लड़कों के खिलौने हो जाते हैं। लेकिन क़ब्ल इसके कि हज़रत हम उनका ऐसा use करें, यह ज़रूरी है कि उन्होंने खुद अपने में यह सिफ़त पैदा कर ली हो।

महीनों से मिस्टर एक्स के आने की ख़बर थी। इनके कालेज में वाक़े होने के पहले ही लोगों को इनसे मोहब्बत हो गई थी, इसका सबब यह था कि ये ही हज़रत हमारे नये बोर्डिङ्ग के वार्डन भी बनाए गए थे।

आख़िर एक दिन ये professor-warden हज़रत आही टपके। curiosity बेचारी आँखों को हंटर मार रही थी।

---

1 उल्लू।

दर्शनों के लिए जी तड़प रहा था। इतने इन्तज़ार के बाद हुज़ूर का दीदार नसीब हो ही गया। आप नौजवान आदमी थे—ख़ूबसूरत भी थे, ख़ास कर नाक तो बढ़ कर ग़ागलोल हो गयी थी। आप को आँखें मटकाने की विद्या भी ख़ूब याद थी।

हम लोगों ने तो यही समझा कि आप किसी थियेटर से निकल कर आ रहे हैं।

थे आप बी० ए०। आपको teaching experience भी था। आपने कोई छः-सात महीने एक Lower primary School में पढ़ाया था। हम लोगों के पढ़ाने के लिए यह experience काफ़ी से ज़्यादा था। फिर क्या था, आपके हौसले बढ़ गए, आपने हम लोगों के नसीब को भी जगाने का पूरा पक्का इरादा कर लिया।

अपने readers को यह बात याद दिलाने की ज़रूरत तो है ही नहीं कि यार लोग मियाँ·········न के भी क़िबलेगाह हैं। बन्दों की सूझ ही तो ठहरी—दूर तक पहुँची। रात का वक्त था, सब लोग मिस्टर सिनहा के कमरे में इकट्ठे हुए। सब मामला तै कर रखा।

सबेरा होते ही हम सब लोग साहब के drawing room में जा पहुंचे। साहब अभी तरो-ताज़ा आए थे, सो चटपट बाहर निकल आए। उनके आते ही सबने दहने हाथ से चोंच बना कर उसे हिलाते हुए कहा Chonch Sir!

साहब ने अपनी टोपी उतार ली। पर हम लोग चोंच बनाए ही रहे। आख़िर साहब होते हैं in positive mind के। आप हमारे Senior prefect से पूछ ही बैठे

—What is this Mr. Sinha?

Mr. Sinha—Don't you know?

Prof. C.—No.

Mr. Sinha—Now you are in India, you should know our customs.

Prof. C.—I am so sorry. I do not know.

Mr. S.—This is good morning. When you meet a student, do not forget to salute him after this fashion.. Thats' very easy. The motion is so graceful.

Prof. C.—Undoubtedly it is. I thank you very much. Please repeat what the word is 'Ch-Ch-o-n-ch'

Mr. S.—No Sir, it is 'Chonch'-C-h-on-ch. It is so easy.

Prof. C.—(चोंच बना कर) Just see. Is it right ?

Mr. S.—It is. Sir you are very intelligent. You can learn thease things so easily.

Prof. C.—Oh, we can learn harder things more easily. I shall master your customs and language in a few weeks.

Mr. S.—To be sure, you can. We thank our stars to have you as our professor. We have come here to make a request to you. Here we have started a 'Chonch Sabha' or 'Good Morning Society.' It is one of the most famous clubs of the whole province.

Would you please honour us by becoming its president? Really we can not find a worthier president. We are quite sure you will oblige us by accepting our request.

Prof. C.—I do not think I am worthy of the honour you have conferred upon me. But, however, I shall be only too glad to help you, boys.

Mr. S.—Thank you very much Sir.

Prof. C.—very well, please excuse me now 'Chonch gentlemen.'

All—Chonch, Sir.

बस साहब, हमारी हालत न पूछिए, जैसे ही साहब ने पीठ दिखलायी और बन्दे अली Common room में पहुंचे, वैसे ही क़हक़हे पर क़हक़हे उड़ने लगे, हंसते हंसते हमारे पेट में बल पड़ गए।

गर हमीं मक़तवस्त उ-ईं-मुल्ला।
कार-ए-तिफ़लाँ तमाम ख़ाहद शुद॥

ये "चौंच Sir" और "चौंच Gentleman" कई महीनों चली। कमबख़्ती की मार—कहीं प्रिन्सिपल साहब ने एक दिन 'chonch sir' का यह act देख लिया। वे उसी वक्त समझ गए कि लड़कों ने इन हज़रत को बना डाला है। उन्होंने हमारे चौंच प्रोफ़ेसर साहब को समझा दिया कि लड़कों ने उन्हें चै, चैंन, चाल बना दिया है। उस दिन से यह ड्रामा ख़तम हुआ. लेकिन 'चौंच' का नाम तब से ज़ोर-शोर के साथ फैलना शुरू

हुआ। सभी मज़हबों के मुताबिक़ हमारा चोंच मज़हब भी बहुत पुराना है-सब मज़हबों में इसका दख़ल है-पर प्रोफ़ेसर चोंच की मेहर्बानी से दुनियाँ में आज उसका बोल बाला है।

इलाहाबाद में एक एग्ज़ामिनी की

पहली रात

—:o:—

University fees भेज दी गयी। अब प्रयागराज की यात्रा करनी पड़ेगी। दिल में ख़ुशी हुई। पर इतने ही में चोंच भगवान आ टपके, बोले-'क्यों जी, आख़िर इलाहाबाद में कहाँ ठहरोगे?' मैंने इस पर क़तई ख़्याल न किया था। यह एक नया problem था और था भी बड़ा important. चोंच भगवान का कहना है कि एक chance छोड़ कर, examinee को किसी चीज़ से इतना डर नहीं, जितना इम्तहान के दिनों में examination hall से दूर रहने, ख़राब जगह रहने, ख़राब खाना खाने और इसी तरह की और बातों से है। मेरे professor A. B. C. भी साईकालोजी के बड़े स्कालर थे। वे भी ज़्यादातर इम्तहान के दिनों में failure examinee की हालत को explain किया करते थे। सो मेरे भी कान खड़े होगए (हालां कि जानवर होते हुए भी मैं अपने को जानवर नहीं कहता)। मैंने अपने इलाहाबादी-दोस्तों की याद करनी शुरू की, पर मेरा धोबी कहा करता है कि 'बाबू-जो मेरी गधैया भी जान जाय कि मैं उसे चाहता हूं तो मारे मिजाज़ के वह आज ही से घास खाना छोड़ दे।' सो

जहां उनको मालूम हुआ कि मुझे उनकी ज़रूरत है तहां एका-एक उनका काम बढ़ गया और उन्हें मेरी चिट्ठी का जवाब देने की फ़ुरसत न मिलने लगी। जो दोस्त कालिज के होस्टलों में रहते थे उन्होंने तो साफ़ लिख दिया कि अफ़सोस है हमारे होस्टल में guests दो दिन से ज्यादा नहीं ठहर सकते। मैंने भी सोच लिया कि बेचारा लाचार है। मेरे भाई के साले के एक साढ़ू दरियाबाद में ज़रूर रहते थे और उन्होंने मेरा host होना मंजूर भी कर लिया पर लिख दिया कि "यहां से सिनेट हाल क़रीब छः माइल है। इक्के भी मुश्किल से मिलते हैं।" या चोंच भगवान! सुबह का इम्तहान—छः मील दूर—इक्के भी मुश्किल से मिलते हैं। अब क्या करना चाहिए। अमीर तो कुछ थे ही नहीं कि किसी बड़े आदमी के बंगले पर जा ठहरते या किसी की शिफारिस से किसी बोर्डिङ्ग हाउस में जगह मिल जाती। रुपया भी कम, आराम भी चाहें। अगर उन दिनों आराम नहीं मिलता तो इम्तहान चटपट होता है। बड़े dilemma में पड़ा। पर "राम भरोसे जो रहें तिनके दाता राम।" मेरी भी एक जगह सट्टक लग ही गयी। एक दोस्त ने, जो कालिज के बोर्डिङ्ग में रहते थे, मुझसे कहा कि इलाहाबाद में मेरे एक वकील दोस्त हैं। उनका बाग (बंगला) बड़ा है। मैंने उनको लिख दिया है कि मैं चार-पाँच दोस्तों के साथ आकर उनके यहां ठहरूँगा। और उन्होंने जगह देने का वादा भी किया है। सो तुम भी साथ चलो तो अच्छा हो, साथ रहने से पढ़ाई खूब होगी।" हालां कि मैं इस बात को नहीं मानता कि इम्तहान के दिनों में किसी के साथ पढ़ना अच्छा है, पर क्या करूं, उनका proposal मुझे accept करना ही पड़ा!

होते-करते इलाहाबाद चलने का दिन आगया। देवी-देवता मनाए। सगुन उठाए। बड़ी सावधानी से सामान, किताबें Dietz लैंटर्न, मोमबत्ती, दियासलाई, Smelling Salt, प्रयाग के आयुर्वेद पंचानन पं० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल राजवैद्य भिषङ्मणि का कुसुमाकर तैल और कंघी; तथा आइना, उस्तरा Shaving stick और स्ट्राप; घड़ी, Stove तथा कितनी ही ऐसी Campaign पर लेजाने लायक़ चीजें लेकर मैं स्टेशन पर पहुँचा।

Concession मँगा ही रखा था। चट पट टिकट लेकर हम लोग ट्रेन में सवार हुए। इस वक्त दिल की कुछ ऐसी हालत थी कि Journey का कुछ भी मज़ा न आया। इलाहाबाद में क्या होगा—ठहरने का इन्तज़ाम होगया–हम तो उच्चवर्ण के ठहरे, भोजन का क्या प्रबन्ध होगा–सवारी का क्या इन्तज़ाम होगा? शायद 20 °/ₒ examinees को ये प्रश्न face न करने पड़ते हों–पर मैं तो उन 80 °/ₒ में से था जो कम से कम ग़रीबी के लिहाज़ से सच्चे हिन्दोस्तानी विद्यार्थी हैं और जिनके हर एक कामों में सब से बड़ा question और impedciment रुपए का है।

हमारी ट्रेन रात के ११ बजे इलाहाबाद पहुँची। इलाहाबाद के कम्बख़्त कुलियों से किसी तरह पीछा छुड़ा कर हम लोग बग्घी में सवार हुए। रास्ते में कमानीदार बग्घी में बैठने पर भी U. P. के Metropolis के राजमार्गों के गड्ढों के धक्के खाते, और इस कारण यहाँ की म्यूनिसिपैलिटी को धन्यवाद और आशीर्वाद देते हुए, हम लोग श्रीमान् ………………… ………………—साहब बी० ए०, एल०, एल० बी० वकील हाईकोर्ट के मकान पर जा पहुँचे।

बारह बज चुके थे। हमारे दोस्त ने वकील साहब को आवाज़ दी, एक नौकर ने किवाड़ खोल कर कहा कि "सरकार तौ सोवत अहैं—मुदा कहि दीन हैं कि जब बाबू हरे आवैं तौ उनका टिकाय दियो।" मेरे दोस्त ने कहा कि उनको इस वक्त तकलीफ़ देने की कुछ ज़रूरत नहीं है। हम लोगों को ठहरने के लिए जो कमरा दिया गया हो वहाँ हमारा असबाब ले चलो। यह सुन कर उस नौकर ने हम लोगों का कुछ सामान उठाया, कुछ हमने लिया, कुछ बग्घी वाले ने थामा, और यों उस आलीशान कमरे में पहुँचे जो हम लोगों के स्वागत के लिए नियत किया गया था।

बग्घी वाले को बदस्तूर हुज्जत और तकरार के बाद विदा करके हम लोग उस कमरे में घुसे जिसमें हमें कुछ दिनों रहना था। रात अँधेरी थी। सो बाहर से तो उस मकान का दर्शन उस वक्त हम कर न सके, पर भीतर का हिस्सा हमने ज़रूर देखा, जितना लम्बा (२० फीट) उतना ही चौड़ा और उससे कुछ ज्यादा ऊँचा यह कमरा था। छत पर इलाहाबादी खपड़े पड़े थे। एक तरफ आधी दीवाल उठा कर partition कर दिया गया था। ज़मीन आधी कच्ची और आधी ईंटों-जड़ी थी। कुछ कूड़ा भी मौजूद था। चारपाई एक भी न थी। ख़ैर हम लोगों ने किसी तरह कुछ जगह साफ़ करके वहाँ पर बिस्तरे लगाए और सोने की कोशिस करने लगे। पर हैं—यह आवाज़ कहाँ और यह बदबू कैसी ? हम लोग आख़िर इधर-उधर scrutinize करने लगे। तब कहीं पता लगा कि दीवाल के partition के उस ओर वकील साहब की गाड़ी के घोड़े बंधे हैं और उन्हीं की टापों की यह आवाज़ थी। जिस बू से हमारे दिमाग़ मुअत्तर हो रहे थे वह लीद की

थी। अब suddenly हमें यह revelation हुआ कि हम हुज़ूर वकील साहब के अस्तबल में टिकाए गए हैं।

अब तो जनाब मेरे दोस्त को—जिनके ज़रीए हम लोग वहाँ पहुँचे थे, बड़ा गुस्सा आया। मगर बेचारे इस वक्त इतने शर्माए हुए थे कि कुछ बोल न सके। उस वक्त हम लोग भी चुपचाप रहे और उस रात कल्कि भगवान के वाहन के आश्रम में वास किया। इस तरह इलाहाबाद में हमारी पहली रात बीती। बेहतर यही है कि उस रात का ज्यादा ज़िक्र हम यहाँ न करें।

सुबह हुआ। कौए भी न बोलने पाए थे कि मेरे दोस्त उठ कर कहीं बाहर चले गए। (वे पहले भी इलाहाबाद आ चुके थे)। बाहर से वे कोई तीन घंटे में लौटे और साथ में बग्घी लेते आए। उन्होंने कहा कि हम ठहरने की एक अच्छी जगह तै कर आए हैं। वहीं इसी दम चलेंगे।

हम लोग गाड़ी पर असबाब रख ही रहे थे कि हुज़ूर वकील साहब तशरीफ लाए। उन्हें जब मालूम हुआ कि हम लोग उनकी ख़ातिरदारी को क़बूल करने में चीं-चपड़ कर रहे हैं तब उन्होंने जिरह करनी शुरू की। आपने फ़र्माया—"आख़िर आपको यहाँ किस बात की कमी है।" अब तो मेरे एक मन चले दोस्त से न रहा गया। उन्होंने बिस्तर लपेटते हुए कहा—"फ़कत घास और चाहिये।" इतना सुनते ही वकील साहब कट गए। उनको ज़रा नाख़ुश देख एक दूसरे साहब ने कहा—"वकील साहब! आप नाराज़ न हों। आप का इसमें कुछ क़सूर नहीं। भरसक आपने तो अच्छी ही जगह दी, पर क्या करें हम लोगों

को साफ़ और अच्छी जगह में रहने की कुछ बुरी आदत ही पड़ गई है।"

इस तरह अपने मिहरबान वकील साहब से बिदा होकर हम लोग कटरे चले। रास्ते में देखा कि कई एक पीपल के पेड़ पर वकील और डाक्टर टँगे हैं— I mean उनके साइनबोर्ड टँगे हैं। साइनबोर्ड लगाने की इस अनोखी जगह की ईजाद देख मेरी तबियत बहुत .खुश हुई। कटरे में मेरे दोस्त ५०) पर इम्तहान के दिनों तक के लिए एक छोटा सा मकान तै कर आए थे। वह मकान भी इलाहाबाद की omni present खपड़ैल से सुशोभित था। floor कच्चा था। ख़ैरियत यही थी कि दोमंज़िला था, पर दोपहर में जैसे कुछ खपड़ैल तपते हैं, वह वही जान सकता है जिसे गर्मी में इलाहाबाद के खपड़ैलदार मकान में रहने का दुर्भाग्य हुआ है। इस fabulous किराए पर यह मकान! ज़रूरत!—अपार तेरी माया, माया है तेरी अपार!

यूनिवर्सिटी एग्ज़ामिनेशन

:o:

जिस आदमी को फाँसी की सज़ा दी जा चुकी हो और अगर आप जानना चाहते हों कि उसके दिल की क्या हालत है तो आपको चाहिए कि आप इम्तहान से कोई पन्द्रह दिन पहले एग्ज़ामिनीज़ के दिल की हालत पूछिए। हमारी [illegible] यूनिवर्सिटी जिस हिकमत के साथ एग्ज़ामिनर्स का नाम छिपाती है वह किसी से छिपा नहीं। पर .... के [illegible] स्टूडेण्टों से यह पर्दा अब तक चल सकता है।

चाहे सही हो या ग़लत इम्तहान से १५। २० दिन पहले कुल होस्टल्स, कालिजों लाजेज़ में इन फर्ज़ी या असली एग्ज़ामिनर्स के नोट्स उनके फेवरिट क्वेश्चन्स, उनके इम्पार्टेण्ट मार्क्स सर्कुलेट होते रहते हैं। अगर किसी पर उस फ़र्ज़ी एग्ज़ामिनर के कोई ख़ास स्टुडैण्ट होने का शक हुआ तब तो जनाब, उसकी इम्पार्टेन्स या मार्केट प्राइस बढ़कर स्केयर्सिटी प्राइस हो जाती है। जिस Credulity के साथ पुराने ग्रीक ओरेकल सुना करते थे, उसी तरह उसका एक एक वर्ड (शब्द) लोग ध्यान से सुनते हैं। मैं उस कम्बख़्त या ख़ुशबख़्त (समझ में नहीं आता कौनसा एडजेक्टिव यूज़ (प्रयोग) करूँ) से दिल से सिम्पथाइज़ करता हूं क्योंकि बिचारे को दम तक नहीं मिलती।

सुबह चुपचाप जाकर किसी एग्ज़ामिनी के कमरे में देखिए—तबीयत ख़ुश हो जायगी। बेचारा किताबों के साथ बुरी तरह चिपटा होगा। शेक्सपियर, मिल्टन, स्टिवेन्सन को डिसेक्ट (dissect) कर रहा होगा, इन बेचारों की आत्माएँ (जहाँ कहीं भी हों) ज़रूर ही अनइज़ी (uneasy) होंगी क्योंकि एनोटेटर्स, स्टुडैण्ट, प्रोफेसर—सभी उनके एक एक लफ़्ज़ की खाल खींचते हैं। इनमें से किसी को भी मन्शा यह नहीं थी कि उनकी बनाई किताबें बेचारे स्टुडैण्ट्स को रात रात भर जगावें और उन्हें टार्मैण्ट (torment) दें। और यह तो मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि कम से कम हमारे [illegible] स्टिवेन्सन का तो यह इन्टेन्शन (intention उद्देश्य) हरगिज़ न था, अगर किसी को भी मुझको ditto होने का ख़्याल है तो साफ़ ज़ाहिर है कि उसने कभी भी स्टिवेन्सन को नहीं समझा और उसकी फिलासफ़ी [illegible] उस पर [illegible] होगी

है। और शेक्सपियर—शेक्सपियर का case तो सचमुच pitiable है। जिसने कभी कालिज में दाखिल होने की तकलीफ़ नहीं उठाई वह भला स्टुडेण्ट्स को क्यों टार्मेण्ट देगा? रह गए मिल्टन, सो मिल्टन के बारे में कहा ही क्या जा सकता है। जिसने पढ़ते पढ़ते अपनी आँखें खुद ही फोड़ डाली हों—और फिर भी पढ़ते ही रह गया—उसका एग्ज़ाम्पल हम लोगों के किसी भी काम का नहीं। जिसे भाई अपनी आखों से हाथ धोना हो, या शैतान बीलज़बब वगैरह से मुलाक़ात करनी हो वह उनकी बात करे। कम से कम मैं तो उनसे कोसों दूर भागता हूं।

[illegible] दर्जनों ही नोट्स भी वहाँ मौजूद हैं। [illegible] के पीछे पड़ा है, कोई नोट्स ही चाट रहा है—कोई इम्पार्टेण्ट मार्क्स ही घट किए जा रहा है—न दिन को कल है, न रात को नींद, न खाना ही अच्छा मालूम होता है और न खेलना ही। एक एग्ज़ामिनी साहब फर्माते हैं—

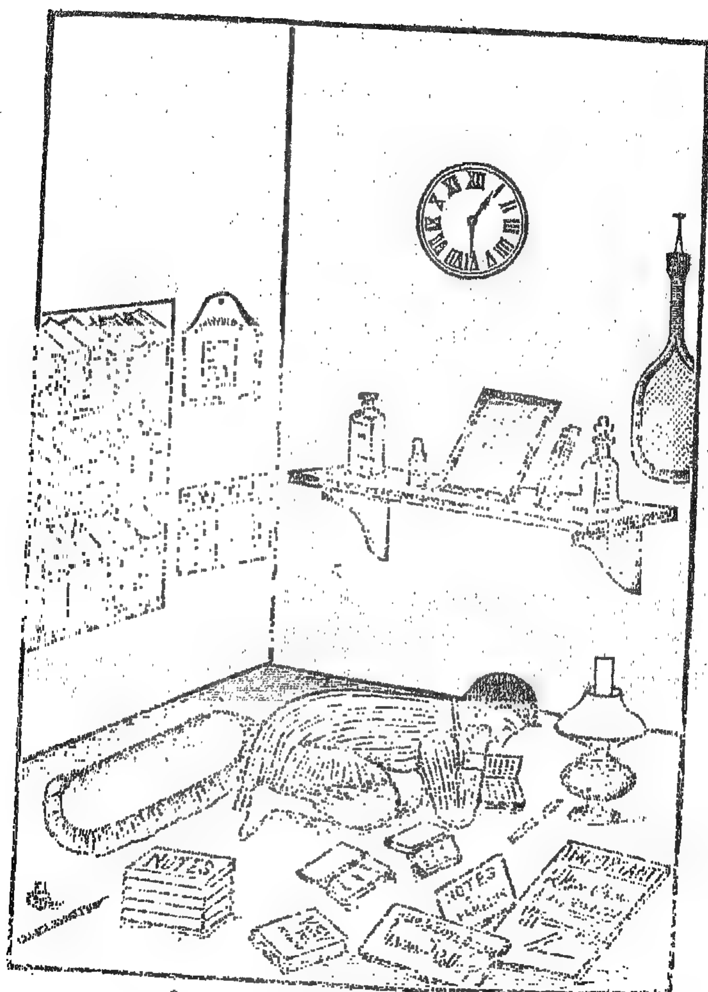
दिन को लिया न चैन न कल रात को आयी
'नुक़वर्म' की डिग्री थी घिसने ही में पायी
'की' और 'नोट' चाट के की उनकी सफ़ाई
निकली नई जो 'की' उसे तत्काल मँगाई
'इम्पार्टेण्ट मार्क' को भी दी न रिहाई
इस फेर में पड़ हेल्थ बिचारी थी गँवाई
'कालिज' भी दिया छोड़, न "रैकट" ही उठाई
'थियेटर' [illegible] तो पैन्टो नहीं भाई
कमरे को किया बन्द तो फिर "बोल्ट" चढ़ाई
'नो एडमिशन' का 'बिल' भी वहाँ और लगाई

फिर जिस तरह से मैंने मचाई थी पढ़ाई
बेहतर है कि वह हाल ही पूंछो नहीं भाई

इसके ठीक उल्टा एक ख़ुशदिल-तबीयत (पढ़ेंगे लिखेंगे तो होंगे ख़राब, खेलेंगे कूदेंगे तो होंगे नवाब) वाले दूसरे साहब फ़र्माते हैं—

रात दिन हमसे न मेहनत होगी।
ये भी कर लेंगे जो फ़ुर्सत होगी॥
हड्डी कोह से भारी है हमें।
किस पै पत्थर की तबीयत होगी॥
गर मुक़द्दर में नहीं शीरीनी।
दाल रोटी पै क़नाअत होगी॥
ऐ इम्तहान तुझ पै ख़ुदा की लानत।
हिन्द से कब तेरी रुख़सत होगी॥
मारे फिरते हैं तेरे शैदाई।
जाने क्या क्या अभी ज़िल्लत होगी॥

इस तरह ज्यों-त्यों करके इम्तहान का दिन आगया। गोया front पर जाने का हुक्म हुआ। रात ही को मुहिम पर जाने की तैयारी करने लगा। निब, कलम, रबड़, चाकू, पेन्सिल, घड़ी वग़ैरह गोला-बारूद और हर्बे-हथियारों से लैस करके अपने कोट को खूंटी पर टांग दिया। रात करवटें लेते बीती, सुबह तयार होने लगा। निबट कर शीशे के सामने आया। गोया बसौं [illegible] कंघी हाथ में ली, अपने रेशम के लच्छों ऐसे बालों को सँवारने लगा। पर जैसे ही अपना मुंह देखा, वैसे ही मारे अचम्भे के जहाँ का तहाँ रह गया। चेहरा ज़र्द! आँखें गड्ढे में Owl haggard face! गोया सालों का बीमारी के



जिस जिस तरह से मैंने मचाई थी पढ़ाई
बेहतर है कि वह हाल भी पूछो नहीं भाई

Some are born failures, some achieve failure, while some have failure thrust upon them.

बाद उठा हूं। कुछ देर तक तो यही शक रहा कि कहीं थाइसिस तो नहीं हो गया ? चेहरे की तमाम सुर्खी काफ़ूर थी।

टूटी कमर झुक गये कंध।
हुआ तीन चौथाई अन्ध॥
सूखा पेट सिकुड़ कर आंत।
पिचके गाल चमकते दांत॥

यही इम्तहान है। इम्तहान नहीं बल्कि शैतान है। अगर इम्तहान न होता तो मैं हमेशा स्टूडेण्ट रहना पसन्द करता।

ख़ैर साहब। सिनेट हाल पहुँचा। सीट शाम ही को देख गया था। वहां जाकर बैठ गया। अजब समाँ था! कुछ लोग पेड़ों के नीचे, कुछ लान पर, कुछ कारिडोर में, कुछ सीढ़ी पर, कुछ कहीं, कुछ कहीं, फैले हुए थे। कोई किताब घोट रहा था, कोई ग्रामर को इस गौर से देख रहा था कि अब वह उसे चबाए बिना छोड़ने का नहीं, कोई कालिजों के इम्पोर्टेण्ट पीसेज़ (pieces) देख रहा था। कहीं पर तीन-तीन, चार-चार का गोल खड़ा मज़ाक कर रहा था और कहीं कहीं self important और grave महाशय खड़े stare कर रहे थे।

पहला घण्टा हुआ। लोग अपनी अपनी सीट पर जा बैठे। कुछ लोग अब भी किताबों और नोट्स का पिण्ड नहीं छोड़ते थे। अब हाल में कुछ हलका सा humming sound रह गया। लोग अपनी अपनी कापियों पर नाम लिखने लगे। Impatience बढ़ने लगी। बार बार घड़ियाँ consult की जाने लगीं। एक एक सेकण्ड एक एक दिन के बराबर जान पड़ने लगा। इतने ही में घण्टा हुआ। गार्ड स पेपर बांटने लगे। एक मिनट के अन्दर ही सारे हाल में सन्नाटा छा गया।

पेपर मिलते ही लिखनेवालों के क़लम और कागज़ का

समवाय सम्बन्ध जोड़ दिया। लोग कापियों पर अपनी लियाक़त की कै करने लगे। किसी की तो क़लम काग़ज़ पर से हिली ही नहीं और किसी की शुरू से आख़ीर तक स्याही ही में गोते लगाते हुए नज़र आने लगी। कुछ [illegible] की ओर ताक ताक कर लिखते, कोई अपने जूते [illegible] हुए लिखते जाते। कोई कलम उठा कर कापी से ऐसे भिड़े कि—

छोड़ना हश्र तक क़सम है।

सारांश यह कि सब यथाशक्ति लिखने ही में लगे हुए थे। बीच बीच में Professor लोग घूम घूम कर अपनी अपनी Duty निभा रहे थे। इतने में एक ओर से ज़ोर की आवाज़ आई कि "यह क्या किया है" बस सब की आँखें उधर ही फिर गईं। देखा कि प्रोफ़ेसर चौंच के हाथ में एक Blotting paper का टुकड़ा है और सामने नज़ीर खड़ा है। मामला यह था कि नज़ीर Blotting paper पर एक Arithmetic के सवाल को लगाकर अपने किसी दोस्त दुलारे की ओर बढ़ा रहा था; काग़ज़ बढ़ाते समय असावधानी से प्रोफ़ेसर साहब की नज़र में आ गया और उसकी पेशी होने लगी। प्रोफ़ेसर साहब ने पूछा यह Blotting तुम दुलारे को क्यों दे रहे थे? "उसी का था Desk पर से नीचे गिर गया था मैं उठाकर रख रहा था" कह कर नज़ीर उनकी ओर ताकता रहा। चूंकि नक़ल या काना-फूसी कर पूछ-ताछ करनेवालों को यह उम्मीद हुआ करती है कि उनके इस तरह के जवाब उन्हें छुटकारा दिलाने के लिए काफ़ी होते हैं, और अपनी सफ़ाई दिखाने के लिए ही साफ़-साफ़ इसी प्रकार जवाब दिया करते हैं। फिर प्रोफ़ेसर साहब ने पूछा कि "अच्छा इस पर यह हिसाब कैसा हल किया है।" नज़ीर ने फ़रमाया—"मुझे क्या पता—दुलारे

ही ने Rough किया होगा।"—"अच्छा मैं तुमको प्रिंसिपल के सामने पेश करूंगा" कहकर प्रोफ़ेसर साहब रिआयत कर गये।

ख़ैर। टाइम बीतने लगा। लोगों ने लिख कर रिवीज़न करना शुरू किया। अब खिसकन्त आरम्भ हुई। एक उठा, दूसरा उठा। तीसरे ने टोपी उठाई। चौथे ने कापी दी। गार्ड ने चिल्ला कर कहा—Five minutes more. इस पर कुछ लोग ऐसे चौंके गोया उनकी पीनक टूट गई। अब वे हक्का बक्का होकर कलम दौड़ाने लगे। कुछ लोग लिख चुकने पर भी न उठे। Revison किया फिर re-revison किया, पर उन्हें कापी से इतनी मुहब्बत थी कि एकाएक उसे जुदा नहीं किया जाता था। आखिरकार घण्टा बजा। गार्ड कापियों के ऊपर झपटे। जैसे चूहों के ऊपर बिल्ली। लड़के भागने लगे। पर कुछ ऐसे भी थे कि शायद बिना धक्का पाए बाहर जाना उनके लिए असम्भव था।

हाल के बाहर का समां देखने लायक था। चोंच महाराज के अनुसार तीन तरह के examinees होते हैं। उत्तम, मध्यम और नीच। उत्तम तो वे अक़्लमन्द sage और क़ाबिल स्टूडेण्ट हैं जो हाल से बाहर आते ही paper को फाड़ कर फेंक देते हैं या मियां चिराग़ अली के हवाले कर देते हैं या सिगरट बनाकर उसे पी डालते हैं। एग्ज़ामिनेशन पेपर की ऐसी चीज़ के लिए इससे अच्छी और कोई ख़ातिरख़्वाह नहीं। इससे दीन भी दुरुस्त और दुनिया भी। ख़ुदा भी ख़ुश रहे, शैतान भी बेज़ार न हो। मध्यम जाति के वे Mediocre, second class और wordly wise भले आदमी यानी gentlemen हैं जो उसे (पे) क़ीमती चीज़ों की तरह घर ले अपनी जेब के हवाले करते हैं और घर पहुंच कर उसे किसी ऐसा

जगह रख देते हैं जहाँ से वह जल्दी-जल्दी ढूँढ़ने पर भी न मिल सके। और साहब! नीच जाति में वे thirde class, अक्ल की भसनदें हैं जो हाल से बाहर निकलते ही उस document को लेकर आगरे या बरेली के एक ख़ास मकान में (जिसमें किराया नहीं देना पड़ता) रहने वाले की तरह इधर उधर दौड़ते हैं और उछल कूद में लंगूर को भी मात करने का दावा करते हैं। हालाँ कि हमारी यूनिवर्सिटी साफ़ साफ़ लिख देती है कि पर्चे पर किसी भी हालत में कुछ न लिखना चाहिए—पर ये हज़रत उसकी कब सुनने वाले हैं? इस war-time की पनीली स्याही से अपने पेपर को चितकबरा बनाए ये साहब बाहर निकलते ही पहले साहब से (कुछ मुजायका नहीं अगर वह जान पहिचान का नहीं है) सवाल करते हैं—"क्यों भई! पहले सवाल का जवाब क्या है?' देखिए इतना ही तो आता है,' क्यों साहब यह ठीक तो है?" इन्हीं पहले साहब ही से नहीं, पर तमाम जान पहिचान के साथियों से उनका यही सवाल होता है अगर हज़रत शैतान की मेहरबानी से कहीं उनका एक भी सवाल ग़लत हो गया (और यूनिवर्सिटी में एक आधा सवाल का ग़लत हो जाना सब ज़रूरी है नहीं तो ज़्यादा लोग first division में आने लगें और अक्ल के दिली दोस्तों को शक हो जाय कि उनकी प्यारी यूनिवर्सिटी का standard अब lower होकर पाताल चला) तब तो उनकी हालत का बयान करना बिलकुल ही असम्भव है। उस paper का तो जो बनना बिगड़ना था, बन बिगड़ चुका; अब मारे anxiety के दिमाग़ कुलाँचें मारने लगा और दूसरे दिन का भी paper चौपट हुआ।

इन तीन जातियों के अलावा दो ऐसी जातियाँ और भी

होती हैं जिनके बारे में कुछ लिखना ज़रूरी है। एक तो over modest दूसरे under modest ओवर माडेस्ट तो वे हज़रत हैं जो कर तो आए हैं छः में दो सवाल और बाहर आकर कहते हैं कि मेरा सैकण्ड डिवीज़न तो कहीं गया ही नहीं और फ़ख्र के साथ अपने father को लिखते हैं:—

Dear papa–To day's paper was very good. I have tried all the questions and I am sure the examiner will be satisfied with my answers. I hope to come out atleast in the Second Division.

अब जनाबमन्! अण्डर माडेस्ट की भी तारीफ़ सुन लीजिए। आप अपनी कुल लियाक़त कापी में कै कर आए हैं, जानते हैं ६०% मार्क्स ज़रूर ही मुझे मिलेंगे, पर आप satisfied नहीं हैं। आप परमात्मा का कृतज्ञ grateful होना जानते ही नहीं। सन्तोष का सबक़ सीखा ही नहीं। बाहर आकर मातमी मुँह बना कर आप फ़र्माते हैं–'क्या कहें यार! आज का तो paper बिलकुल ही चौपट हो गया।' बाज़ वक़्त तो खुद चोंच भगवान नहीं समझ सकते कि इनके साथ sympathy ज़ाहिर करें या condolence?

चोंच भगवान का कहना है कि जिस तरह से हमारी यूनिवर्सिटी में इम्तहान की रस्म अदा की जाती है। जिस तरह आदमी के लिए पैदा होना, शादी करना और मरना ज़रूरी है, और इन कामों में उसकी कोई voice या choice नहीं, उसे इन बातों को भोगना ही पड़ता है, वैसे ही यह इम्तहान है। यह इम्तहान का Insitution आज का नहीं–बल्कि बाबा आदम के ज़माने का है failure भी उन्हीं के ज़माने से पैदा हुई क्योंकि बाबा आदम खुद इम्तहान में

fail हो गये थे और यही और failure with vengeance हम पर पड़ी है। कोई भी चूँ नहीं करता, कि आख़िर इन cramming की क़ै के इम्तहानों की क्या क़ीमत है? और क्या वह क़ीमत यानी हेल्थ जो हम उसके लिए देते हैं, उसके लिए काफ़ी से कहीं ज़्यादा नहीं है? पर हम तो साहब उस बात को मानते हैं जो पुरानी है-वेदों के वक्त से चली आती हो। इस तरह के इम्तहान की रस्म पुरानी है। बड़े बड़े लोग इसे मानते चले आए हैं-फिर मैं क्यों न मानूँ? सो साहब, इम्तहानाय नमो नमस्ते!

RESULT OUT.

ज्यों-त्यों करके इम्तहान से पीछा छूटा। आख़ीर पर्चा करके लड़के सिनेट हाल से ग़ायब होने लगे। 'सिनेट हाल' की सूरत से नफ़रत होगई। इलाहाबाद की हवा में दम घुटने लगा—मालूम होने लगा कि अगर कहीं इलाहाबाद में घण्टे भर भी और रहे तो दिमाग़ इसी तरह घूमने लगेगा जिस तरह 'सिनामेटोग्राफ़' का रोल फ़िल्म। डेरे में आते ही चट-पट असबाब बाँध गाड़ीवाले को बुला स्टेशन की राह ली। हालाँ कि गाड़ी में अभी कई घंटों की देर थी--पर डेरे में ठहरना नामुमकिन! ख़ैर किसी तरह प्लेटफ़ार्म पर टहलते, ह्वीलर की बुकस्टाल को देखते-भालते, सोडा और आइस लेमोनेड को पीते-पिलाते गाड़ी आगई। इन्टर में इतना 'रश'! पर किसी तरह 'अरब और ऊँट' वाला क़िस्सा याद कर बेञ्च के एक कोने पर आसन जमा ही लिया। राम राम करके गाड़ी चली। जब प्लेटफ़ार्म से बाहर खुले में गाड़ी आई तब मालूम हुआ कि हाँ, लङ्गस (lungs) अपना function किये जा रहे हैं!

घर पहुँच कर जान में जान आई। मालूम हुआ कि

लूसिटानिया disaster से बचकर आ रहा हूँ। क्या करूँ क्या न करूँ कुछ समझ में न आया। 'सुबह होती है शाम होती है, उम्र यों ही तमाम होती है।" एक दोस्त ने चिट्ठी में लिख भेजा कि क्या कर रहे हो? मैंने जवाब में लिख दिया भाई! मरने के बाद से लेकर क़यामत के दिन तक ईसाइयों की आत्माओं की जो हालत होती है वही हालत इम्तहान से लेकर रिज़ल्ट आउट होने तक एग्ज़ामिनीज़ की रहती है। वही undefinable condition मेरी है।"

ज्यों त्यों करते जून का महीना आया। इलाहाबाद की याद आई। 'लीडर' लाने वाले से ताकीद कर दी कि पहले लीडर मेरे ही यहां लाया करो। इलाहाबाद में रहनेवाले दोस्तों को चिट्ठी पर चिट्ठी लिखने लगा। लीडर आफ़िस में भी तार के लिए रुपया भेज दिया। दोस्तों को wire करने के लिए क़समें दिला दीं। पर जवाब यही आता कि अभी रिज़ल्ट में देर है।

एक दिन एक दोस्त का ख़त आया कि सिण्डिकेट की मीटिङ्ग १४ तारीख़ को होगी। बस अब क्या था? दिन-रात 'रिज़ल्ट' का भूत सरपर सवार रहने लगा, सपने में भी रिज़ल्ट का तार दिखलायी पड़ने लगा। जब दो तीन दिन बीत जाने पर भी रिज़ल्ट न आया तब सोचा कि अपने डेरे गाम कहीं फ़ेल तो नहीं होगये जिससे कि यारों ने ख़बर नहीं दी। जिस तरह भंग पीकर जो धुन सवार होती है वह एक सिरे तक पहुंच जाती है उसी तरह से जो फ़ेल होने का सन्देह दिल में उठा तो फिर बस—बिलकुल यक़ीन होगया कि यार तुम ज़रूर फ़ेल होगये। पर 'लीडर' में तो रिज़ल्ट अभी आया नहीं शायद उनको रिज़ल्ट देर से मिला हो और वे छाप न सके

हों। इसी तरह की उधेड़ बुन करते-कराते दिन बीतने लगे। १५ तारीख़ हुई, सोलह हुई, सत्रह हुई, अठारह हुई—आख़िर anciery बिचारी भी थक कर भाग गई। मैं भी कुछ कुछ बेफ़िक्र होकर मौज करने लगा।

एक दिन दोपहर के वक़्त बैठक में लेटा था—कर क्या रहे थे? वही जो दोपहर में करना चाहिये। इतने में बाहर से आवाज़ आई 'बाबू जी—तार ले जाइए।' सुनते ही कलेजा धक होगया। अजब नहीं कि एक दो सैकण्ड के लिये दिल का चलना बन्द होगया हो। चटपट बाहर आया—टेलिग्राम-पियन के हाथ से छीन कर लिफ़ाफ़ा फाड़ डाला। काँपते हाथों से जो उसे खोला तो उसमें लिखा था

Congratulations passed in third division.

पियन ने लम्बा सलाम किया। बैठक से सब दोस्त दौड़ आये। अबतो Congratulations की झड़ी लगी। शेकहैण्ड के लिए लोग मेरे हाथ-पैर टूट पड़े। अगर उस वक़्त मेरे पास रावण के बीस या सहस्रबाहु के हज़ार हाथ भी होते तो भी कुछ लोगों से यही कहना पड़ता please wait, at peseent there is no vacancy फिर तो जनाब क़हक़हे पर क़हक़हे उड़ने लगे। मिठाइयों के ऑर्डर्स forward किये जाने लगे। हज़रत पियन फ़रमाने लगे कि बिना एक छटाँक चाँदी लिए, हे यहाँ से टलने के नहीं, दोस्त लोग दावतों की बन्दिशें बाँधने लगे।—बस मिठाई का नाम लेते ही क़लम पर फड़फड़ाने लगी—बाक़ी ख़ुद ख़्याल कर लीजिए।

एक ला स्टुडेण्ट के एडवेंचर्स

यूँ जनाब ! रिज़ल्ट आउट हुआ । future scheme आगे की बन्दिशें बंधने लगीं । किसी ने कहा लड़की जाओ, किसी ने कहा अभी बछेड़े ही तो हो, एम० ए० ज्वाइन करो । किसी ने कहा डिप्टी कलक्टरी के नामिनेशन के लिये कोशिश करो, किसी ने कहा 'ला' लेक्चर्स एटैण्ड करो, किसी ने अमरीका जाने को कहा, किसी ने इङ्गलैण्ड की हवा खाने की सलाह दी। इसी तरह किसी ने कुछ, और किसी ने कुछ कहा । दुनियाँ में जितने काम किये जा सकते हैं, मैं सब के योग्य समझा गया क्योंकि सभी काम करने की सलाह दी गयी । जहाँ-जहाँ आदमी जा सकता है (एक जहन्नुम छोड़ कर) सभी जगह जाने के लिये मुझसे कहा गया पर इतनी choice दी गयी कि selection करना कठिन हो गया । मैंने भी आगे की बातें आगे रख मौज करनी आरम्भ करदी ।

इधर congratulatory letters की धूम पड़ गई, result के बाद इतनी इफ़रात बरसाती मेंढकों की तरह हो जाती है । पर क्या किया जाय ? यह result के necessary adjuncts हैं ।

दावतों का हाल लिखने की ज़रूरत नहीं । लिख तो देता पर consideration इतना ही है कि कहीं आपकी लार न टपक पड़े । इससे थोड़ा लिखा बहुत समझिये ।

आखिर बहुत कुछ आगा-पीछा, ऊँच-नीच, दायाँ-बायाँ, बुरा-भला समझ कर तै किया कि ला-कालिज join करो और साथ ही एम० ए० भी लो । इस इरादे को दिल में रख मैंने एक दिन अपना शहर छोड़ ही दिया ।

हालाँ कि मैं late यानी जुलाई के आख़िर week में पहुँचा था पर बेचारा Law College बड़ा ही सीधा है। उसने admit कर ही लिया। ला-कालिज ही दुनियाँ में ऐसी जगह है जहां ग्रेजुएट्स बिना किसी पशोपेश के जा सकते हैं और जहाँ के दरवाज़े हमेशा खुले रहते हैं। पर late आने का फल तब मालूम हुआ जब ला बोर्डिंङ्ग हाउस के warden ने कहा कि कोई कमरा खाली नहीं है। शहर में और भी कई बोर्डिङ्ग और होस्टल्स थे, पर जहाँ जाता वहाँ यही जवाब मिलता—vacancy नहीं है। आख़िरकार जब एक लाज ने लाज रखी तब कहीं ठहरने की जगह मिली।

ला-कालिज तो join कर लिया, अब एम० ए० की फ़िक्र पड़ी। कालिज के प्रिन्सिपल से मिला। उन्होंने छूटते ही कहा हम लोग मामूली तौर से Law Students को एम० ए० में allow नहीं करते, पर हाँ अगर तुम्हारा professor concerned तुम्हें permit कर दे तो मैं ले सकता हूं। इस पर मैं professor concerned की ख़िदमत में हाज़िर हुआ लेकिन प्रोफ़ेसर साहब की sweet will इस से प्रसन्न हुई और उन्होंने साफ़ कह दिया कि ला स्टूडैण्ट को मैं नहीं ले सकता। मैंने भी एम० ए० को छोड़ 'ला' का पीछा पकड़ा।

ला स्टूडैण्ट की 'लाइफ़' भी भई क्या है! जनम से सिखाया गया कि दस से चार तक स्कूल या कालेज में रहो, शाम को खेलो, सुबह पढ़ो—पर ग्यारह साल की इस क़वायद के बाद एकाएक 'आर्डर' revert कर दिया गया। सुबह शाम तो कालेज जाओ "और दिन भर—?" "दिन भर मन आवे सो करो" दिन कैसे कटे? अब इसकी फ़िक्र हुई। कोल्हू

के वैल तो थे ही नहीं कि दिन भर पढ़ें और शाम को 'ला लैकचर्स' एटैण्ड करें। कई दिन तक यह प्राब्लम पेश रहा।

ख़ैर साहब—काम की फ़िक्र हुई। इसके दो सबब थे। एक तो यह कि वक़्त नहीं कटता था। दूसरे यह कि अब घर का माल बेकार खाते बुरा मालूम होता था। स्वामी सत्यदेव की किताबें पढ़ी थीं। उनमें लिखा था कि अमरीका में बहुत से विद्यार्थी स्वयं रुपया कमा कर पढ़ते थे। मैंने सोचा कि यदि अब मैं अपने आप रुपया कमा कर अपना ख़र्च चलाऊँ तब तो लोग इस spirit को अवश्य ही पसन्द करेंगे। आगे जो चाहे सो हो—पर मैं अपनी spirit अपने आप appreciate करके मन ही मन ख़ुश होने लगा।

फिर तो काम की टोह हुई। दोस्तों से चर्चा की और कह दिया कि अगर कोई काम मेरे लायक़ दिखलाई पड़े तो ख़बर देना। मैं भी लीडर के 'वान्टेड' कालम को रोज़ बिना नागा देखने लगा। पड़ोस में कुछ लोगों ने एक लाइब्रेरी और रीडिङ्ग-रूम खोल रखा था। वहाँ जाकर 'पायोनियर' भी देख आता था। पर कभी इच्छा पूरी नहीं होती थी।

एक दिन एक दोस्त ने कहा कि भई! अगर कोई काम नहीं मिलता तो कोई ट्यूशन ही कर लो। मैंने भी कहा बैठे से बेगार भली। पता लगाते लगाते मालूम हुआ कि मिस्टर रीपट को अपने लड़के के लिये एक टीचर की ज़रूरत है। तीन घंटे पढ़ाना होगा। ३०) माहवारी मिलेगा। ये मिस्टर रीपट एज्यूकेशनल डिपार्टमेण्ट में थे। मैंने उन्हें एक ख़त लिखा कि मैंने सुना है कि आपको अपने लड़के के लिए एक टीचर की ज़रूरत है। मेरे पास समय है। यदि आप चाहें तो मेरी 'सर्विसेज़' का आप उपयोग कर सकते हैं। दूसरे दिन

साहब का जवाब आया। उसमें शिष्टता के साथ मुझे धन्यवाद दिया गया था और लिखा था कि साहब को दुःख है कि साहब मेरे बहुमूल्य offer को स्वीकार नहीं कर सकते। उसका कारण यह है कि मैं 'ला स्टुडेण्ट' हूं!

एक हफ्ते बाद एक दोस्त ने खबर दी कि एक स्कूल में एक 'टीचर' की जगह खाली हुई है। ४५) रुपये महीने की जगह है। अगर कोशिश करो तो शायद मिल जाय। इसके लिए उस स्कूल के प्रेसिडेण्ट से मिलना होगा। यह खबर पा मैंने पहले अपने मित्र को कृतज्ञतापूर्ण अन्तःकरण से करोड़ों धन्यवाद दिया। फिर वहीं बैठे बैठे चट एक Draft बनाया। मित्र के चले जाने पर दावात में नई स्याही बना ढूंढ़-खोजकर अच्छा बढ़िया होल्डर निकाला और मोटे फुलस्केप के full sheet पर बड़ी सावधानी से सुधार सुधार कर उसकी नकल करने लगा। दो तीन कागज़ खराब करने पर कहीं मन के मुताबिक अर्ज़ी तैयार हो सकी। उसे तीन चार बार पढ़ा, अक्षरों की बनावट को देखा। फिर मन से Pass कर certificate ले लिफाफे में रख लिया। President जी के सहपाठी एक वकील मेरे ही महल्ले में रहते थे। कुछ-कुछ उनसे मेरी देखा-भाली थी। उनसे एक Recommendation letter लिखाने के लिये ड्योढ़ी पर हाज़िर हुआ। वकील साहब संयोग से घर पर ही थे, इधर उधर के सवालों के बाद मैंने अपना असली अभिप्राय फेर-फार से प्रकट किया। उन्होंने प्रेसिडेंट साहब के नाम एक चिट्ठी लिखी और मुझे देकर कहा कि तुम उनके पास जाओ, इससे तुम्हारा काम सिद्ध हो जायगा। मैंने मन ही मन अपने शुभेच्छु वकील साहब की उदारता को खूब सराहा और अन्त में एक लंबा

सलाम कर घर की राह ली। दूसरे दिन सुबह मैंने 'सूट' से अपना शृंगार कर, अपने certificates ले, उस blessed स्कूल के प्रेसीडेण्ट के मकान की तरफ़ कूच किया।

खोजते-खाजते प्रेसिडेण्ट साहब का मकान मिला। हिन्दोस्तानी ढँग का मकान—किवाड़ बन्द—कोई बाहर नहीं किसको आवाज़ दूँ। इसी बीच भीतर से एक लड़का निकला। मैंने उससे दर्याफ़्त किया कि प्रेसीडेण्ट साहब घर पर हैं या नहीं—पता लगा कि मौजूद हैं। मैंने अपना कार्ड निकाल कर उस लड़के के हाथ में दिया और कहा कि यह उनके पास पहुँचा दो। लड़का कार्ड लेकर भीतर गया और लौट कर बोला—'ज़रा ठहरिए अभी काम में हैं। ५ मिनिट में मिलेंगे।' ख़ैर, बाहर खड़ा रहा। दर्वाज़े के बाहर छोटा सा कच्चा गन्दा चबूतरा था—वहाँ खड़े होने का जी तो चाहता ही न था, बैठने की कौन कहे और यह तो प्रेसीडेण्ट साहब के ऊँचे दिमाग़ में घुस ही किधर से सकता था कि जिस एक भले आदमी को बाहर ठहरने को कहला भेजा। हैं—वह बेचारा आख़िर क्या करेगा? उसकी कुछ ख़ातिरदारी करनी चाहिए। मैंने घड़ी देखी, पाँच मिनिट हुए, दस मिनिट हुए, पन्द्रह मिनिट हुए, शायद अब प्रेसिडेण्ट साहब बुलावें। बीस मिनिट हुए—पच्चीस मिनिट हुए तब भी प्रेसीडेण्ट साहब को ख़्याल न आया। मैंने ख़्याल किया कि Kipling ने ऐसों ही को देख कर Asiatic disregard for time लिखा था।

आध घंटे के बाद मेरा धीरज छूट गया और मैंने किवाड़ की साँकल खटखटाई 'पर जनाब ज़मीं जुम्बद न जुम्बद गुल मोहम्मद!' आख़िर मैं हैरान होकर वापिस जाने ही को था

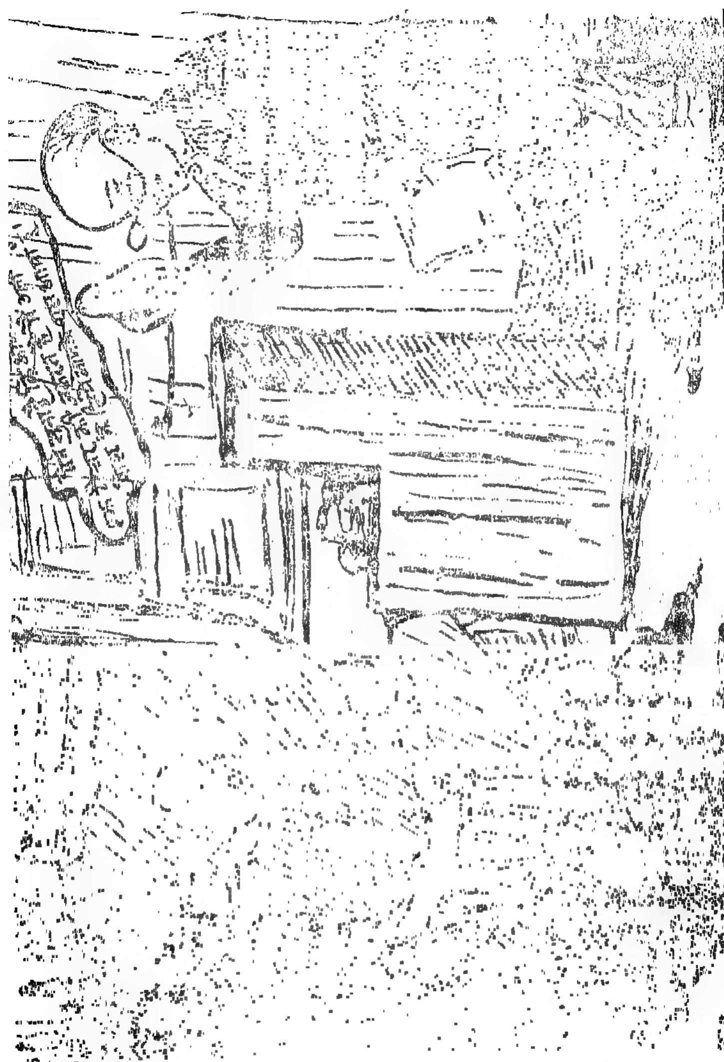
कि एक नौकर बाहर आया और उसने simplicity का ख़ातमा करके मुझसे कहा कि 'चला हो—तुह का महराज ऊपर बुलावत हैं।' मैं उसके ये कोमल और आदर से भीने बचन सुन कर गद्गद हो गया। अब जनाब ऊपर जाना है। नीचे देखा पौर में जूते रखे हैं। लिहाज़ा मुझे भी जूते उतारना लाज़िम था। मैंने भी अपने फुलबूट को खोलना आरम्भ किया। अब मोज़े पहिने मैं ऊपर चला। जी में मोज़े भी क्यों न उतार लिए—पर साहब अब उस 'मर्करी' के आगे उतारने पाता तब न? और जनाब आगे आगे वह मर्करी और पीछे पीछे मैं—ज़ीने पर चढ़ने लगा। मालूम होता था ओलिम्पयस पर चढ़ा जा रहा हूँ और अभी अभी जुपिटर के सामने पहुँच जाऊँगा।

ऊपर पहुँच कर मुझे एक कमरा दिखा दिया गया। मैं उसमें चला गया। अन्दर देखा तो सामने ही एक लम्बे चौड़े महाशय बैठे हुए हैं। काला बदन है। जितने लम्बे हैं-उतने ही चौड़े हैं-और उतने ही मोटे भी हैं। अच्छे ख़ासे cube हैं।

रोल्ड गोल्ड का चश्मा लगाए थे। कमरे के एक कोने में एक मेज़ पड़ी थी और उसके पास एक ही कुर्सी थी, उसी कुर्सी पर आप डटे थे। कमरे में और कोई कुर्सी नहीं थी। ज़मीन में एक चटाई बिछी थी, इस अँग्रेज़ी और हिन्दोस्तानी ढंग के amalgamation से मुझे सख़्त तकलीफ़ हुई! हुज़ूर प्रेसीडैण्ट साहब ने मुझसे उसी चटाई पर बैठ जाने का हुक्म दिया। हालाँ कि पतलून की वजह से बैठना मेरे लिये एक कठिन काम था, लेकिन मैं अपने would be superior का हुक्म भला कैसे टाल सकता था? किसी तरह बैठ ही गया।

कुर्सी पर बैठे ही बैठे प्रेसीडेंएट साहब ने मुझसे सवाल किया "कहिये आप ने कैसे तकलीफ़ की ?" मैंने जवाब में कहा "मैंने सुना है कि आपके स्कूल में एक टीचर की ज़रूरत है। मैं उसी पोस्ट के लिए आपके पास आया हूं।" इतना कह कर मैंने अपनी अर्ज़ी—जिसमें कि मेरे सर्टिफिकेट्स भी attached थे, हुजूर की खिदमत में पेश की। हुजूर ने बड़े ग़ौर से उनको पढ़ना शुरू किया। उनमें मेरे प्रिन्सिपल, हेडमास्टर प्रोफेसर्स वगैरह के एक से एक बढ़कर सार्टिफिकट और Recomend letters मौजूद थे। अब तो मुझे पूरी उम्मेद होगई कि रंग-ढंग अच्छे हैं और मेरी application ज़रूर मंजूर होगी। पढ़ना ख़तम करने पर हुज़ूर ने मुझे एक बार सिर से पैर तक देखा और फर्माया ठीक है। पर आप यहाँ इलाहाबाद में क्या करते हैं। आप रहनेवाले तो यहाँ के हैं नहीं। मैंने कहा-यहाँ मैंने Law College ज्वाइन कर लिया है। इतना सुनते ही प्रेसीडेंएट साहब चौंक उठे। आपने अपनी आवाज़ ऊँची कर कहा "ओहो! आप ला स्टुडेंएट हैं।—मैं ला स्टुडेंएट्स को स्कालरशिप नहीं देता।" असल बात तो यह है कि प्रेसीडेंएट साहब तो जितना चौंके उतना ही, पर मैं तो उनकी हालत देख बिल्कुल ही चौंक पड़ा। ला स्टुडेंएट के नाम का असर उनपर ऐसा ही हुआ जैसा रात के वक्त लड़कों पर होआ या जू जू का या जंगली घोड़े पर पड़ाके की आवाज़ का। उस वक्त तक जिस किसी ने भी मुझ से किसी बात के लिये इन्कार किया था, तो मुँह से या हाथ से या सिर से यानी किसी एक चीज़ से, लेकिन मुझसे इन्कार करते वक्त, प्रेसीडेंएट साहब को दोनों हाथ, सिर, बदन सब काम में लाने पड़े—





एक ला स्टूडण्ट के एडवेंचर्स—पृ० ३३

"लगे हाथ हिलने, लगा झूमने सिर
वो चिल्लाय' उठे "वेकेन्सी नहीं है""

उनकी यह हालत देख पहले तो मुझे बड़ी परेशानी हुई, पर कुछ देर बाद मैंने उनका मतलब समझ लिया। और मुझसे उनसे ये बातचीत हुई—

मैं—आख़िर आप हम ला स्टूडेण्टों से इतने नाराज़ क्यों हैं? क्या हम लोगों में उन लोगों से कम लियाक़त है जो 'ला' नहीं लिये?

प्रे०—बात ये है कि आप लोग बिलकुल ही रिलायाबुल नहीं होते। दो-तीन बरस रह कर चल देते हैं। इससे हमारे काम में बड़ा हर्ज़ा होता है।

मैं—पर क्या आपके यहाँ के सब टीचरों ने बांड लिख दिया है कि वे कभी आपका स्कूल न छोड़ेंगे?

प्रे०—नहीं, हम सबसे दो वर्ष का बांड ले लेते हैं।

मैं—मैं भी दो वर्ष का बांड देने को तैयार हूं।

प्रे०—पर आप लोगों को अपनी पढ़ाई से तो फ़ुरसत मिलती ही नहीं, आप लोग स्कूल में क्या पढ़ाएँगे?

मैं—आपके स्कूल-टाइम में मैं भी बराबर प्रेज़ेण्ट रहूंगा, बराबर काम करूँगा। School hours के बाद न तो non-law-student ही से आप कुछ कह सकते हैं और न मुझ से ही।

प्रे०—पर आप तो शाम-सुबह ला-कालेज एटैण्ड करते हैं, फिर स्कूल के लिए प्रिपरेशन कब कीजियेगा?

मैं—क़रीब-क़रीब सभी teachers ट्यूशन करते हैं और वक्त, भी उन्हें सुबह-शाम ही मिलता है। अगर वे पढ़ाने के लिये preparation कर सकते हैं तो मैं भी कर सकता हूं।

प्रे०—पर इम्तहान के दिनों में आप लोग महीने भर की छुट्टी चाहते हैं, उससे स्कूल का नुकसान होता है।

मैं—क्या आप किसी टीचर को एफ० ए०, बी० ए०, या एम० ए०, में appear होने को allow नहीं करते?

प्रे०—करते क्यों नहीं?

मैं—तब तो वे भी अपने इम्तहान से पहले छुट्टी लेते होंगे?

प्रे०—ज़रूर

मैं—तब फिर ला-स्टूडेण्ट्स ने क्या कसूर किया है? बल्कि आपको तो एक advantage यह है कि जिन दिनों वे छुट्टी लेते हैं उन दिनों higher class (S. L. C. और Matric.) के इम्तहान होते रहते हैं और काम कम हो जाता है।

प्रे०—पर और टीचर्स इस लाइन में रहेंगे, आपका तो ठिकाना ही नहीं।

मैं—यह किसी के बारे में नहीं कहा जा सकता कि वह कब तक किसी खास जगह या खास line में रहेगा। खास कर आपके स्कूल के लिए तो यह rule लागू हो ही नहीं जाता क्योंकि न तो आपकी post ही pensionable है और न provident fund का benefit ही है। जब कभी उनको better job मिलेगा, वे चल देंगे। फिर आप यह भी नहीं कह सकते कि ला-ग्रेजुएट ला-डिग्री लेने पर चले ही जायेंगे, मैं कई ऐसे teachers को जानता हूं जो L. L. B. पास हैं। अगर और information चाहें तो आपही के स्कूल में कई एल० एल० बी० टीचर्स हैं।

प्रे०—हैं तो, पर साहब! हम क्या करें? हमें तो law students लेने का permission ही नहीं है।

मैं—तअज्जुब है ! जितने recognised schools हैं करीब-करीब सब में law students हैं। इसी शहर के High school और— High school में तमाम ला-स्टुडैण्ट टीचर हैं।

प्र०—मैंने भी यह सुना है। पर मैं आप से एक बात कहता हूं। मैं स्पष्टवक्ता हूं और इस लिए आप मेरे कहने का बुरा न मानियेगा। ला-स्टूडैण्ट अक्सर झगड़ालू होते हैं और superiors की दाब नहीं मानते। और इस से भी बड़ा सबब यह है कि Law students जब ला पास कर के practice करने लगते हैं तब 'होमरूल' 'होम-रूल' चिल्लाते हैं और हमारी सरकार को अपनी demands से तंग करते हैं। ऐसे लोगों को टीचर रखना, उनको स्कालरशिप देकर उनकी मदद करना होगा। मैं यह काम हर्गिज़ न करूँगा। मुझे माफ़ कीजिये।

किसी वक्त, मैं बड़ा अच्छा debator समझा जाता था। कालेज की debating society में मेरी तूती बोलती थी, और भी कितनी ही debating clubs में मैं part ले चुका था, पर सच जानिए [illegible] कुल अक्ल गुम हो गई। इस [illegible] की आवें बाँधिये [illegible] और कोई चारा न [illegible] होता, कभी गुस्सा आता— [illegible] बे आहिस्ता बाअदब खमोशी [illegible] हुजूर प्रेसीडैण्ट साहब को दस्तबस्ता सलाम करके घर लौट आया।

इस adventure के बाद कुछ दिनों मैं [illegible] रहा। ला-कालिज बन्द होने ही को था कि डीस्ट्रिक्ट में फिर teachers की कई एक wants छपीं। उनमें से एक यह थी:—

WANTED.

A graduate Strong in Mathematics English, History and Sanscrit. Must be a keen athlete, knowledge of Hindi and Urdu essenticl. Experienced graduate or M. A. shall be given preference. Gentlemen attending law-lectures or intending to appear at any examination of Law need not apply. Salary Rs. 40 per month according to qualification.

Apply to MANAGER,
HIGH SCHOOL
Murgh Khana

यह एडवर्टाइज़मेण्ट (विज्ञापन) पढ़ कर मेरा जी बाग़ बाग़ हो गया, मेरे एक दोस्त कहने लगे—क्यों नहीं अक़्ल ही तो है । हुज़ूर को ग्रेजुएट चाहिये Mathematics (गणित) English (अंग्रेज़ी) History संस्कृत में Strong हो । हिन्दी भी जानता हो और उर्दू भी जानता हो । खिलाड़ी भी हो । लेकिन तनख़्वाह क्या देंगे ? चालीस रुपये । लेकिन ला-स्टुडेण्ट यहाँ भी न चाहिये । मालूम होता है मैनेजर साहब की अक़्ल लावारसी गाय की तरह किले के परेड में विचरने चली गई थी । ख़ैर साहब । इस criticism के बाद एक दूसरा वान्टेड पढ़ा गया उसमें एक temporary teacher की उसी शहर के एक स्कूल के लिये ज़रूरत थी । हेडमास्टर के पास अर्ज़ी भेजनी थी ।

मैंने सोचा कि संदेशों खेती नहीं होती—ख़ुद जाना चाहिये । मेरे एक दोस्त ने मुझ से कहा कि उस स्कूल में

मिस्टर रामप्रसाद भी हैं। वे पारसाल final में फेल हो गये थे, इससे वहां चले गये हैं। अगर तुम चाहो तो उनसे भी कुछ मदद मिल सकती है। मैंने उनके नाम एक चिट्ठी ले ली और हेडमास्टर साहब से मिलने के लिये चला।

किन्तु ज्योंही मैं अपने घर से चलकर स्कूल की ओर मुड़ा कि चौराहे पर देखा कि हजरत हेडमास्टर साहब एक एक्के पर बैठे हैं और एक्केवाला चलो-हटो की आवाज देता हुआ एक्का बढ़ा रहा है। लाचार हो, मुझे उस दिन डेरे पर लौट जाना पड़ा। दूसरे दिन इतवार था। सोचा आज फुरसत का दिन है, घर पर ही इतमीनान से मिल लूंगा। यह सुयोग पाकर मैं उनके घर की ओर लपका। राह भर हनुमान चालीसा का पाठ और श्रीहनुमान जी को सवासेर लड्डू चढ़ाने का संकल्प करता हुआ हेडमास्टर साहब की गली में घुसा। घर पर आवाज लगाते ही कलेजा दहलाने वाला उत्तर मिला कि वे किसी विशेष कार्य के लिये मिर्जापुर जाने के लिये अभी-अभी स्टेशन की ओर गये हैं। सुनकर मेरा मुख सूख गया। आज का सुयोग भी हाथ से जाना चाहता था। देखा अभी गाड़ी छूटने में आधा घंटा का time है, फिर वे अभी ही तो स्टेशन की ओर गए भी हैं। यदि आज मौका भी निकल गया तो फिर हाथ मलते ही रहना पड़ेगा। ऐसा विचार आते ही उल्टे पांव मैं स्टेशन की ओर भागा। रास्ते में एक ताँगा दिखाई दिया, सोचा इसी में हेडमास्टर साहब होंगे। और ज़ोर से दौड़ने लगा। खूब ज़ोर से दौड़ने पर भी ताँगा आगे निकल गया। मालूम हुआ हेडमास्टर साहब ताँगे से उतर कर Train पर जा चढ़े। मैं भी हाँफता हुआ प्लेटफार्म-टिकट ले डब्बों में उन्हें ढूंढने लगा। एक

second class में उनके दर्शन हो गये। मेरे जी में जी आया। मैंने खिड़की में सिर घुसेड़ कुछ पूछना चाहा। इतने में तीन कोने का मुंह बना, त्योरी बदलकर उन्होंने मेरी ओर देखा। मेरे देवता कूच कर गये। अब मुझे मालूम हुआ कि वे हेड-मास्टर साहब नहीं हैं, वरन एक अंग्रेज़ सज्जन हैं। घबड़ाकर Beg your Pardon Sir कहता हुआ झट से आगे बढ़ा। पर ससुरी गाड़ी भभकाती हुई चल दी। अब क्या हो! मैं अपनी इस भूल और घबड़ाहट पर अत्यन्त लज्जित हुआ और पश्चाताप करता घर लौटा। सोमवार के दिन early in the morning उठकर स्नान किया, फिर दस बार गायत्री का जप किया और रामायण का पाठ किया। भोजन आदि से निपट कर डरते डरते स्कूल की राह पकड़ी। मन ही मन

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा।
हृदय राखि कौशलपुर राजा॥

चौपाई का पाठ करता जाता था।

स्कूल में दाखिल होते ही एक नोटिस पर नज़र पड़ी। उसमें लिखा था बाहरी आदमियों को स्कूल में घुसने या घूमने की इजाज़त नहीं है। अगर कोई शख्स हुज़ूर फ़ैज़ गंजूर हेडमास्टर साहब से मिलना चाहे तो उसे पहले चप-रासी के ज़रिये हुज़ूरवाला के पास कार्ड भेज कर इजाज़त ले लेनी चाहिये। यह Important Notice पढ़ते ही मैं वहीं खड़ा रह गया। आगे कैसे बढ़ता? बाहरी आदमी तो स्कूल में (जो आखिरकार public building है) बिला हुक्म घुस नहीं सकता। अब क्या किया जाय? मैंने सोचा कि जिस अक्ल के पुतले ने यह नोटिस यहां लगाया है उसने बाहरी आदमियों

की convenience के लिये कोई चपरासी भी ज़रूर ही मुकर्रर किया होगा, पर वहां न चपरासी, न चपरासी की परछाहीं। ख़ैर, मैं कोई १५ मिनट तक भुलाया-सा वहीं खड़ा रहा। आख़िरकार बहुत डरते डरते, कुल हिम्मत collect करके (आख़िर बुज़दिल ही तो ठहरा) मैंने अपने तईं स्कूल बिल्डिङ्ग के अन्दर दाखिल कर ही दिया। कुछ देर बाद एक चपरासी नज़र आया। मैंने उससे "साहब" के पास card ले जाने को नम्रतापूर्वक कहा। पर उसने will बड़ी मेहरबानी से कहा 'देखलेउ नाहीं—काम में लगे हैं। हम साहब के नौकर हैं, तुम्हरे तो हैं नहीं। ऊ दूसर चपरासी है—उहका कारड काहे नाहीं देलेउ।'

किसी ने कहा है कि मालिक की लियाक़त उसके नौकर से मालूम हो जाती है। जैसे अगर कोई शख़्स सफ़ाई-पसन्द है तो उसका नौकर भी साफ़ होगा, इसी तरह से जो मालिक सभ्य, शायस्ता-बातमीज़ और gentleman है उसका नौकर भी भले आदमियों के साथ बर्ताव करना जानता है। और vice versa सो मैंने उस नौकर से ही—जो हुज़ूर हेडमास्टर साहब का pet servant मुँहलगा नौकर था—हुज़ूर वाला की लियाक़त मालूम कर ली।

ख़ैर, मैंने दूसरे चपरासी से अपनी अर्ज़ी कह सुनाई। उसने condescending तरीक़े से मेरे हाथ से बिना कुछ कहे कार्ड ले लिया और चला गया। थोड़ी देर में लौट कर बोला 'मास्टर साहब पढ़ा रहे हैं। घंटा ख़तम होने पर मिलेंगे' इतना कह कर वह एक ओर चला गया। ख़ैर, जी में आया। सोचा, जब मिल गये हैं तो काम सफल ही हो

आयगा। आखिरकार यहां भी वही सवाल दरपेश हुआ जो मेरे पुराने प्रेसीडेंट साहब के दर्वाज़े पर पेश हुआ था। जो भला आदमी हुज़ूर से मुलाकात करने आवे, और जिससे घंटे आध घंटे wait कराना चाहें, उसके बैठने का आखिर कुछ इन्तज़ाम भी तो होना चाहिए। खैर इन्हीं thoughts में गर्क मैं हुज़ूर हेडमास्टर साहब के office के सामने टहलता रहा, इसी तरह कोई पौन घण्टा बीत गया। इतने में ही घंटा हुआ। हेडमास्टर साहब दर्जे से निकल कर office चले गये। कोई पांच मिनट बाद चपरासी ने आकर कहा कि 'हुज़ूर हेडमास्टर साहब' ने सलाम दिया है। इस सलाम से कृतकृत्य हो मैं हेडमास्टर साहब के हुजूर में दाखिल हुआ।

हेडमास्टर साहब लाम्बे-कद, cleanshaved, साँवले-रङ्ग, दुहरे-बदन, खूबसूरत जवान थे। उनके चेहरे से रोब टपका पड़ता था। लच्छेदार बातचीत करने में आप लासानी मालूम होते थे।

In act more graceful and humane; he seemed
For dignity compose[illegible];
Dropt manna, and c[illegible]
The better reason, to perplex and dash
Maturest counsels.
Yet he pleased the ear.

इससे ही आप समझ सकते हैं कि इनकी बातचीत कैसी रही होगी। आपने छूटते ही मुझसे कहा—कहिए, मैं आपकी क्या खिदमत कर सकता हूं? मैंने अपना मतलब कह सुनाया। बातचीत होते होते आपने अपने श्रीमुख से कहा—

मुझे आपको लेने में बड़ी ख़ुशी होती, और really मुझे बड़ा रञ्ज है कि मैं इतना valuable addition अपने स्कूल में नहीं कर सका। पर क्या करूँ लाचार हूं। We donot give any post to law students. पर हाँ, आपके लिए मैं एक बार मैनेजर साहब से ज़रूर कोशिश करूँगा। पर मैं आपको कोई Word नहीं दे सकता। चूँकि जगह temporary है इससे मुमकिन है कि आप ही को मिल जाय।

मैं—मुझे कब ख़बर मिलेगी।

हे० मा०—आप कल दस बजे आकर दर्याफ़्त कर जा सकते हैं।

इस बीच में एक स्टूडैण्ट वहाँ आ गया। उसे देख कर हुज़ूर ने साहबी ठाठ से सवाल किया 'क्या चाहते हो ?' लड़के ने कहा कि मैं बड़ा ग़रीब हूं और कुछ लोगों की generosity के कारण अपना ख़र्च चला रहा हूं। मैं पुराने स्कूल में भी free था। चूँकि अब मेरे पिता (जो एक मामूली क्लर्क थे) को पेन्शन मिल गई है, इसलिए यहाँ चला आया हूं। मैं आपसे freeship के लिए प्रार्थना करने आया हूं।

इस पर हुज़ूर हेडमास्टर साहब ने फ़र्माया—सुनोजी, जब मेरे स्कूल में फ़ीस देने वाले लड़के मिलते हैं और बाज़ बाज़ दर्जों में तो मुझे बहुतों के admission refuse कर देना पड़ता है, तब मुझे क्या ज़रूरत पड़ी है जो मैं तुमको free ले लूँ ?

इस पर लड़के ने गिड़गिड़ा कर कहा—

But Sir, shall you not be pleased to consider the case of a really poor students ?

'No—not at all. Why should I ? This is no poor house. This is a school.

सृष्टि की इस अनोखी कृति को देख मैं अवाक् रह गया। क्या ही sympathetic हृदय है। हाँ—स्कूलों में केवल अमीरों के लड़कों के लिए जगह है। किन्तु ऐ दरिद्रो ! सरस्वती चाहे तुमसे प्रसन्न ही क्यों न हो पर ये महाशय तुमसे कदापि प्रसन्न नहीं हो सकते।

जहाँ में किसके हों अब ये रहें सब
खबर ला दे कोई तहतुस्सरा की

इस बातचीत के बाद उन्होंने अपनी कुर्सी कुछ पीछे हटाई। मैं समझ गया कि यह मेरे जाने के लिये इशारा है। मैंने भी सलाम कर विदा ली।

दूसरे दिन अपने वादे के मुताबिक मैं दस बजे स्कूल पहुंचा उस वक्त prayer हो रही थी लड़के और कुछ टीचर मिलकर कुछ गा रहे थे। वह prayer प्रार्थना, या गाना इतना गड़बड़ था कि मैं उसका सिर पैर कुछ भी न समझ सका। It was a confusion worse confounded मैं भी चुपचाप खड़ा इस performance को देख रहा था। मैं हेडमास्टर साहब के हुज़ूर में गया। उस वक्त उनके मिजाज़ कुछ गर्म से थे। आपने देखते ही मुझसे abruptly कहा—I am sorry I can not do any thing for a law student यह सुन मैं चलना ही चाहता था कि हेडमास्टर साहब के पास खड़े हुए एक महाशय बोले—But Mr. Ram Prasad is also a law student इस पर हुज़ूर ने फ़रमाया—

No, he is not a law student. He will privately appear at the law examination. He has completed his lectures and studies privately. One can do anything one likes at one's house.

'But one must not attend the law lectures' इतना कह और Law Student की यह नई व्याख्या सुन, और ला-स्टूडैण्ट के नाम की महिमा मन ही मन गाते, मैं डेरे पर लौट आया और अब मज़े से अपने गाँव में Durga Pooja vacation enjoy कर रहा हूँ। और जब-कब यह गीत गाकर अपनी दशा की याद करता रहता हूं—

मिलता नहीं कहीं कुछ काम।
पास नहीं है एक छदाम॥
ऐसे कुसमय में करतार।
सुनलो मेरी राम! पुकार॥
'मुण्डी' पढ़े करें आनन्द।
बैठे लिखें, लगा असनन्द॥
पढ़ कर अँगरेज़ी भर-मार।
पर मैं हूं बिलकुल बेकार॥
'कैमिस्ट्री' सब डाली घोट।
'साईंसों' को गया सपोट॥
पका न पाया रोटी-दाल।
क्रिया कुशलता का यह हाल॥
'अर्थशास्त्र' का हूँ आचार्य।
फिरूँ खोजता सेवा-कार्य॥
बन जाऊँ 'दासों का दास'।
दे दे कोई रुपे पचास॥
'हिस्ट्री' चाट भखा भूगोल।
पर इनका कुछ मिला न मोल॥
याद रही है बस यह बात।
"हिन्दू थे 'वहशी' 'बदज़ात" ॥

रेखा, अंक, बीज से विज्ञ।
कहलाऊँ प्रसिद्ध गणितज्ञ ॥
तो भी बनियाँ करे कमाल।
ठगे, न तोले पूरा माल ॥
पाने को पूँजी की 'पर्स'।
पढ़ डाली सारी 'कौमर्स' ॥
'बुक कीपिंग' का बूँका मार।
हुआ न मेरा बेड़ा पार ॥

फ़ैशन की तुलसी।

——:❀:——

जब छोटा था तब गाँव की पाठशाला में पढ़ता था। हमारा गाँव रेल की लाइन से दूर था इसलिए सभ्यता की रोशनी उस तक अच्छी तरह नहीं पहुँची थी, सो लड़कपन में मैंने जाना ही नहीं कि फ़ैशन क्या चिड़िया है। गाँव के रहीम जुलाहे के बुने चारख़ाने का कपड़ा लेकर बुड्ढे बुद्धू दर्ज़ी से ही मेरा कुर्ता सिलवाया जाता था। बुड्ढा बुद्धू मेरे बाबा के लड़कपन से कुर्ते सीने का काम करता था। बिचारा एक ही cut जानता था। न मैंने और फ़ैशन के कुर्ते देखे थे और न मैं अपने बुद्धू से ही असन्तुष्ट था। गाँव की हाट से धोती लेकर मैं प्रसन्न हो जाता था। बच्चा चमार के बनाए जूते मेरे पैर में एक-डेढ़ साल ठहरते थे पर जब मिडिल पास होकर ज़िला स्कूल में गया तब देखा कि मेरे नए साथियों में कोट का रिवाज ज्यादा है ? मुंडे (अंग्रेज़ी) जूते की भी चाल अधिक है। मेरे एक मास्टर ने एक दिन दर्जे में कुछ बात समझाते हुये कहा था कि When you are in Rome, do as Romans do.

मैंने भी सोचा कि यह "शहर" है—कुछ गाँव तो है नहीं। अब मैं भी क्यों न शहरुआ बन जाऊँ। अतएव मैंने अपने इस शुभ या अशुभ संकल्प को शीघ्र ही पूरा करने का विचार किया। मेरे मामा एक दफ़्तर में काम करते थे, मैं उन्हीं के साथ रहा करता था सो एक दिन मैंने उनसे कहा कि मुझे कपड़े बनवा दीजिए। वे भी 'बाबू' थे और उन्हें पसन्द न था कि उनका भांजा "देहाती गँवार" बना रहे, इसलिए उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से मेरा प्रस्ताव मंज़ूर कर लिया।

इतवार के दिन मैंने अपने मामा के साथ बाज़ार की सैर की ठानी। मेरे मामा कुछ कुछ 'स्वदेशी' थे सो, मुझे वे एक स्वदेशी दुकान पर ले गए। दुकान पर एक गंदा नोटिस लगा था उस पर लिखा था 'सुदसी कपड़े की दूकान यहाँ सब तरह के सुदेशी कपड़े और माल मिलता है।' मैंने बड़े आदर के साथ इस 'सुदेसी' दूकान में प्रवेश किया। दूकानदार भी बड़े चलते-पुर्जे असामी थे। और सच बात तो यह है कि बिना चलता-पुर्जा हुए कोई इस तरह की 'सुदेसी' दूकान चला भी नहीं सकता। लोगों की patriotism की enthusiasm को जो एक तरह की [illegible] है काम में लाने के लिए बड़े दिमाग़ की [illegible]। बाबा सैम जान्सन ने एक बार कहा था कि patriotism is the last resort of the scroundels अच्छी चीज़ का बुरा उपयोग किस तरह होता है अगर यह देखना हो तो इस [illegible] शब्द patriotism को देखना चाहिये। इसकी बेदर्दी के साथ हत्या की जाती है। कानपूर, दिल्ली या कलकत्ते के बाज़ारों का कूड़ा और cup piece लेकर दूकानें बना के, महात्मा गाँधी और [illegible] के चित्र [illegible] साइन बोर्ड लगा दिया 'स्वदेशी दुकान'।

चलो, अब क्या कहना है ? स्कूलों के लड़के, स्वदेशी के प्रेमी नौजवान उस दूकान पर टूट पड़े। अगर किसी ने कहा लाला जी इस कपड़े पर मुहर छाप तो है नहीं—या यह कहां लिखा है कि हिन्दोस्तान का बना-माल है, तब आपने बड़े मुअक्किलाने tone से कह दिया, भाई साहब ! अभी हम लोगों को यह बाज़ारूपन नहीं आया। जो विलायत में नहीं बना उस पर मुहर शायद ही कहीं होवे। फिर क्या आपको मेरा यक़ीन नहीं ? बस जनाब, इस argument से अच्छे enthusiastic youngman की बोलती बन्द है। इससे बड़े बड़े बहस करने वाले disarm हो जाते हैं। लाला का यक़ीन भला किसे न होगा ? स्वदेशी के प्रेमी भी कभी धोखा देते हैं ? फिर जो किसी बड़े दिमाग़ वाले ने कहा यह धोती तो अच्छी नहीं है—इस पर लाला जी ने चट से हाथ मटका कर कहा अजी साहब, भला अभी कहीं हम लोग विलाइत वालों का 'मुकाबला' कर सकते हैं ? पर अपनी देस की धोती पहिना हर एक को 'लाज़िम' है। बस इस final stroke के बाद सब मामला ते है। हाँ लाला जी, ठीक तो कहते हैं। हमारी infant industry है, अभी established manufacturers से कहीं compete थोड़े ही कर सकती है। इस झोंक में आ, मैंचेस्टर का रद्दी, बेमाफ़ी माल हमारे सिर मढ़ दिया जाता है। क्या इस में बड़े दिमाग़ की ज़रूरत नहीं है ?

वहाँ पर मैंने 'कमीच' और कोट के लिए कपड़ा ख़रीदा। दूकान में कुछ——————रक्खी थीं, उन पर लिखा था Made in India with Indian labour क्यों न हो ? स्वदेशी होने के लिए इन्हीं दो की तो आवश्यकता है। Made in India with Indian labour (भारत में भारतवासियों की मज़दूरी से

बनी) but with whose capital ? (किन्तु किसके धन से ?) उसका मुनाफ़ा कहाँ जायगा ? विदेशियों की factory, विदेशियों की पूँजी, विदेशी कच्चामाल, फ़ायदा उठावें विदेशी, मालिक विदेशी, मैनेजर विदेशी—lion's share लेने वाले विदेशी—पर चूँकि उस factory के कुली और मज़दूर [illegible] इसलिए वह वस्तु 'सुदेसी'-दूकान में स्थान [illegible] है।

ऐसे स्वदेशी माल को लेकर मैंने अपने गाँव के रहीम जुलाहे से सदा के लिए विदा ली। उसका बनाया चारखाना और कुर्ता अब मेरे educated शरीर के लिए उपयुक्त न रहा। और बुद्धू के बदले एक Singer Sewing machine वाले दर्ज़ी की शरण ली। बच्चा का बनाया जूता अब मेरे पैरों में बुरा मालूम होने लगा सो मैंने कानपुर हैनरी का जूता पहिन कर उसे भी हमेशा के लिए धता बुलाई और इस तरह मैंने फ़ैशन की पहली मंज़िल तै की।

लेकिन लोगों का कहना है कि आदमी stationary नहीं है। सो भला है क्यों कर आगे progress न करता, प्रलय के पहले भगवान् मार्कण्डेयजी (थे सबसे पुराने—व हैं) एक दिन एक तालाब में नहा रहे थे। जब घर चलने लगे तब पानी पीने के लिये [illegible] भर लिया, घर पहुँच कर देखा तो उसमें एक मछली का बच्चा चला आया है। उन्हें उस पर दया आ गई और उन्होंने उसे घड़े में छोड़ दिया। कुछ दिन में वह मछली का बच्चा बड़ा हो गया तब उसने हमारे आदम के भी आदम से कहा कि मुझे कुएँ में डाल दो अब मेरा गुज़ारा इस घड़े में नहीं, उन्होंने वैसा ही किया। कुछ दिनों बाद उस मछली के बच्चे को कुएँ में भी तकलीफ़ होने लगी

क्योंकि nature उस पर अज़हद ख़ुश थी। तब बूढ़े मार्कण्डेय ऋषि को उसे तलाब ले जाना पड़ा। पर ever-progress मछली के बच्चों को कुछ ही दिनों में तालाब छोटा मालूम होने लगा। अब तो मार्कण्डेयजी बड़े असमंजस में पड़े' पर ख़ैर आपने उसे उस तालाब में से निकाल नदी में डाल दिया। पर तब भी उस मछली के बच्चे ने ऋषिराज का पिण्ड न छोड़ा। वह बढ़ता ही गया। still his whiskers grew अब मुनि ने सोचा कि इसे समुद्र में डाल आओ। और वे उसे वहां लेगए, वही हालत मेरी थी। गाँव की पाठशाला से कस्बे के Town-School में और कस्बे के टाउन-स्कूल से शहर के ज़िला-स्कूल में गया। पर वाहरे मैं, थोड़े ही दिनों में इतनी progress कर ली कि ज़िला स्कूल भी छोड़ देना पड़ा। अब किसी College जाने का विचार किया। मेरे चाचा मुझे मार्कण्डेयजी की तरह एक कालेज के होस्टल में छोड़ आये।

होस्टल की लाइफ वही जानता है, जिसे कभी उसमें रहने का सौभाग्य हुआ है। मेरा मतलब यहां उसे describe करने का नहीं। पर हाँ जिस बात का मुझ पर असर हुआ वह फैशन की। यहां फैशन की दुलत्ती मुझ पर ऐसी लगी कि मैं अंटाचित होगया। अब तो मैं college student हुँ— ये Swadeshi Stores की धोती और कपड़ा मुझे suit नहीं करते— प्रायः सभी fellow students जेन्टिलमैन की तरह रहते हैं, फिर मैंने ही क्या कसूर किया है? होस्टल में रहने वाले एक senior student मेरे पीछे पड़ गये मुझे देहाती का खिताब अता फ़र्माया। अब तो मेरी सहन शीलता की हद हो गई मैंने ठाना कि इन यातनाओं से बचने के लिए फ़ैशन की शरण जाने का ढंग—



भाव विदेशी से भर पूर, शिखा सूत्र कर डाले दूर !

भाव विदेशी से भरपूर !
शिखा-सूत्र कर डाले दूर !
हिन्दूपन का मेट निशान ।
बन बैठा कोरा कृश्चान ॥

रविवार के दिन नाई से मैंने पहले पहल Albert fashion के बाल बनवाये और यों fashion का श्रीगणेश किया । शाम को शहर की एक मशहूर दूकान पर जा अपने लिए Up-to-date fashion का suit बनवाया । अभी तक shoe से मेरे चरण प्रसन्न हो जाते थे पर अब full boot के बिना काम चलता न दिखाई पड़ने लगा, एक से अनेक होते हैं-सो अब तो तरह तरह की नई नई wants होने लगीं !

मेरे बगल के कमरे में एक और हज़रत ठहरे थे। उन पर इस फैशन का भूत और भी बुरी तरह सवार हुआ था। ये हज़रत एकसाल second year में रोक लिये गये थे—क़सूर इनका नहीं था; क्योंकि बीमार हो गये थे। हमारा कालिज एक मामूली शहर में था, इसलिए शौक की first class चीज़ें वहाँ नहीं मिल सकती थीं। इसलिए उन्होंने अपने एक चचेरे भाई को यह ख़त लिखाः—

DEAR BROTHER,

I have been for a long time silent without having any communication between us and sorry also that you have not come over to these parts in the last vacation and much more for your unexpected failure in the last examination known that even through our brother M.—has been to these parts in the last holidays and has been to

see me as you may now know that I am improving from that disease, Beriberi due to rat bite on account of which I could not sit in the Intermediate University Examination.

You may be glad to know that I am getting cured and I have joined the College this year a few days back. It is not quite certain if I may get the scholarship as by mischance I had a break though it is no fault of mine. But whatever be the circumstances. I am to study this year at least. As I have come to higher education I want a fountain pen and a watch of the best type and also please send me by paid parcel some best goods meaning cloths, Calcutta trimmed upper cloths of moderate price and any also best shoes which I am to wear always. I hope you do not fail to send these things to me within a week and to write a letter. I request you to be writing letters about all thing homely to us as we will be knowing the things even though we are separated by long distance. Hoping to hear from you soon without delay and thank- ing you in advance.

I remain,

Your most affectionately.

इस ख़त की review करने का time मेरे पास नहीं। इसकी critism आप ही कर लें और साथ ही पहले sentence का analysis भी, As I have come to higher education etc. अहा! क्या argument है! कम से कम Logic का gold medal तो उन्हें ही मिलना चाहिये था, पर कोई क़द्रदाँ ही नहीं। उस हिन्दी कवि ने बहुत ठीक कहा है जिसने लिखा था कि "गुन न हिरान्यों गुन गाहक हिरान्यों है।" सो इन हज़रत के भाई साहब ने इनकी इस English और need को appreciate नहीं किया। ये हज़रत रोज़ रोज़ पार्सल की राह देखते और जब डाकिया निकल जाता तब कहते 'भाई—वी० पी० तो आज भी नहीं आई।' वी० पी० के मतलब कुछ वेल्यू पेबल पार्सल से नहीं, बल्कि paid parcel से है। आख़िरकार उन्होंने एक दूसरा ख़त उन हज़रत के छोटे भाई को लिखा जिन्हें पहला ख़त address किया गया था—

MY DEAR BROTHER,

It is a few days back that I have dropped a card to our brother but I did not receive either any reply or V. P. The class lessons are already began and I am in quite need of a watch of the best sort not costing much and also of fountain pen as I have written already. I hope you will not fail to send them with some fine fashionable cloths. I have joined the College and I am doing very well but I am not quite sure if I may get the scholarship due to the circumstances. You will please

send me the thing I requested at an early date so that I may begin my studies early and punctually. I will please send them to the below home address without fail. No more worthy to pen. Hoping to be favoured with my request, thanking you in advance and hoping to be helped soon.

I remain

Your most affectionately.

इस ख़त के जवाब में सिर्फ़ एक ख़त एक Genera merchant और कमीशन एजेन्ट के यहाँ से आया। उसमें लिखा था कि आपके भाई के order के मुताबिक़ सामान भेजा जाता है। वी० पी० छुड़ा लीजियेगा। V. P. आई भी—लेकिन यह understood है कि वह चुपचाप लौटा दी गई।

चोंचनाथ

वी० पी० लौट जाने के बाद मैंने हज़रत से पूछा कि भाई ये तुम्हारे कैसे भाई हैं जो तुम्हारे लिए suit वेल्यू पेबिल से भिजवा दिया। क्या तुम्हारे लिए इतना ख़र्च भी वे नहीं कर सकते? उन्होंने बड़े संकोच से उत्तर दिया कि इसमें भाईसाहब का तनिक भी क़सूर नहीं है। वे बड़े ही उदार और साधु प्रकृति के पुरुष हैं, किन्तु अब उनपर उनके एक परम मित्र चोंचनाथ का रङ्ग सवा सोलह आने चढ़ गया है। जब से वे उनके follower हुए हैं तब से पैसा तो दाँतों पकड़ने ही लगे हैं कौड़ी न ख़र्चने तक की क़सम खा ली है।

जिसका फल यह हुआ है कि आज सभ्य समाज में लोग इनका प्रातःकाल मुंह भी देखना पसन्द नहीं करते।

यह सुन मैंने सोचा कि चेले का जब यह हाल है तो इनके गुरू चौंचनाथ का नम्बर तो और भी बढ़ा-चढ़ा होगा। अतएव मेरे बहुत आग्रह करने पर हजरत ने चौंचनाथ की संक्षिप्त life सुनाई जिसे यहाँ लिख देना उचित प्रतीत होता है:—

अनेक ओझा, सौतिया, डफाली, और ज्योतिषियों के ज़ोर लगाने; गाजीमियाँ, शाहमदार को चद्दर और शर्बत चढ़ाने; प्रयाग, विन्ध्याचल और विश्वनाथ में चोटियाँ मुड़ाने; अनेक देवी-देवताओं के नामपर धरना धरने; सन्तानगोपाल का पाठ पढ़ने और प्रदोष आदि के अनेकों व्रत करने पर चौंचनाथ का जन्म मूल नक्षत्र के ठीक पहले चरण में हुआ था। इनके जन्म से माता-पिता को वह सुख प्राप्त हुआ जो महाराज दशरथ को अपने चतुर्थपन में श्रीरामचन्द्र के जन्म से हुआ था। परन्तु चौंचनाथ के पिता पुत्र का सुख अधिक न देख सके। "आद्यै पिता नास सुपैति मूले......।" के श्लोक ने अपना फल स्पष्ट करने में कसर न की! पिताजी थोड़े ही दिन बाद स्वर्गवासी हुए। सौभाग्य से सम्बन्धियों के सहारे चौंचनाथ ने सहायता पाई। वहाँ भी इन्होंने "जहँ जहँ चरण परैं संतन के तहँ तहँ बंटाढार" की कहावत चरितार्थ की। जिन्होंने इन्हें अपनाया उन्होंने भी फिर अपने यहाँ से पुत्र के मुख देखने का सौभाग्य न पाया।

सम्बन्धियों ने इन्हें अपना सगा पुत्र समझ सब प्रकार से लालन-पालन कर पढ़ाया, लिखाया, यज्ञोपवीत, ब्याह आदि

संस्कार किये। जब उनकी अवस्था कुछ ढलने लगी कि चोंचनाथ ने उनसे विगाड़ करने की ठानी! और जिसे उन्होंने बड़े कष्ट उठाकर पाला था, जिसे वे अपने बुढ़ापे का सहारा समझे थे वही ठीक बुढ़ापे में दगा दे उनसे अलग हो गया! उन स्त्री-पुरुष ने इस शोक में अपनी जीवनलीला समय से पहले ही कुढ़ कुढ़ कर समाप्त कर दी।

चोंचनाथ अलग तो रहने लगे परन्तु अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त न होने के कारण किसी अच्छी नौकरी के काबिल न हुए। कुछ दिन तक तो श्राद्ध-पिंडा आदि दशकर्म कराकर जीविका चलाते रहे। जब इससे काम न चला तो देशविदेश जाकर पेट पालने की सूझी। सौभाग्य से अपने गुरू की सिफ़ारिश से एक कारख़ाने में दस-बारह रुपये की एक नौकरी मिल गई! दूसरे की निन्दा करना, इधर की बात उधर, उधर की बात इधर लगाना, इनका ख़ास गुण तो था ही इसके साथ ही साथ काम की कायरता और दिनरात की चखचख ने इन्हें वहाँ अधिक दिन टिकने न दिया।

कुछ दिनों तक बेचारे फिर अर्थसंकट में पड़े रहे। उन्हीं गुरू महाराज ने फिर इन्हें एक दूसरे कारख़ाने में रखवा दिया। यहाँ ये अपने हाथ पैर बचाकर काम तो करते रहे परंतु ज़रूरत से अधिक ख़ैरख़्वाही करने के कारण यहाँ तो इनके सब साथी ही इनके दुश्मन हो गये। लाचार होकर यहां से भी छुट्टी लेकर "कहँ काशी कहँ काश्मीर, ख़ुरासान गुजरात, तुलसी ऐसे नरन को प्रारब्ध ले जात।" के अनुसार अंग, बंग, महाराष्ट्र आदि देशों में इन्हें घूमना पड़ा। बारम्बार धक्का खाने पर इन्हें कुछ चेत तो अवश्य हुआ; परंतु स्वभाव का

परिवर्तन होना बड़ा कठिन है। इनके गुणों ने इन्हें शान्ति से कहीं स्थिर न होने दिया! अहसान फरामोशी, और कृतघ्नता तो इनके बांट पड़ गई थी। पहले तो अपने मतलब के लिये ये सब के परम स्नेही बन जाते थे और कुछ दिन बाद ही ये उसकी जड़ें काटने लगते थे। इनके साथ जिस जिस ने भलाई की उसी उसकी इन्होंने बुराई की। दूसरे की उन्नति, दूसरे का ऐश्वर्य और दूसरे की कीर्ति तो इन्हें बाणों के समान सालती थी। जिसका फल यह हुआ कि ये सब के हृदय से उतर गये और लोगों ने इन्हें दूध की मक्खी के समान अलग कर दिया। सौभाग्य से स्त्री बड़ी साध्वी और आज्ञाकारिणी मिली थी; परन्तु उसने भी इनसे सुख नहीं पाया। यद्यपि अब कुछ दिनों से अर्थ कष्ट विशेष न था। आमदनी उत्तरोत्तर बढ़ती जाती थी तथापि उसे भर पेट अन्न और पर्याप्त वस्त्रों की कमी ही रहती थी। वह बेचारी मोटा-मोटा अन्न खाने और फटे-पुराने वस्त्रों में ही सन्तोष करती थी। दैवयोग से वह बीमार पड़ी और अपने सौभाग्य सहित सदैव के लिये चौंचनाथ से सम्बन्ध त्याग स्वर्ग सिधारी। "नारि मुई घर सम्पति नासी। मूड़ मुड़ाय भये सन्यासी॥" यह कहावत बहुत प्रसिद्ध है। लोगों ने समझा कि चौंचनाथ अब सब त्याग कर साधू हो जायँगे और भगवद्भक्ति में सारा जीवन समाप्त करेंगे। परन्तु यह विचार तभी उत्पन्न हो सकता था जब पूर्व जन्म का पुण्य उदय होता। किन्तु ऐसा न हुआ। लोभ और कंजूसी ने इन पर अपना रंग भली प्रकार चढ़ा लिया। बचत के वजट ने बेतुका विस्तार बढ़ाया। पहले तो स्त्री के कारण बहुत सा अनावश्यक व्यय भी हाथ दबाते रहने पर भी हो ही जाता था। अब इन्होंने

अपना ढंग पहले से भी अधिक बदल दिया। मितव्ययी तो थे ही अब आमदनी का सोलहवां भाग ही अपने खाने पहनने आदि के खर्च में उठाने लगे। खर्च के दुश्मन होने और पैसे का प्यार करने के कारण ये थोड़े ही काल में कीर्तिशाली हो गये। बहुत से लोग इन से उपदेश लेने के लिये दूर-दूर देशों से आने लगे। कितने ही इनके पक्के follower भी हो गये। इतना कहकर हजरत ने अपने भाई साहब और उनके गुरू चौंचनाथ के सम्बन्ध की एक घटना भी सुनाई जो इस प्रकार है—

एक दिन की बात है कि भाईसाहब के एक मित्र महेश जी ने उनके गुरू चौंचनाथ के दर्शनों की इच्छा प्रकट की। पहले तो भाईसाहब ने इधर उधर की बातों में इन्हें टालना चाहा; परन्तु जब देखा कि महेश जी का विचार गुरु महराज के दर्शनों के लिये हिमालय के समान अटल है। तब बड़ी मुश्किल के साथ इन्हें अपने साथ ले गये। गुरू महाराज की प्रशंसा महेशजी सालों से सुन रहे थे अतएव दर्शनों की उत्सुकता ने अधीर कर रक्खा था। साथ में जाते हुए उनके स्वरूप, डील-डौल, उनके रहन-सहन, भेष आदि का विचार करते करते दोनों गुरुद्वार पर जा पहुँचे। देखते क्या हैं कि कुटी के द्वार का एक किवाड़ बंद और एक खुला है। सामने आंगन में एक लम्बे-चौड़े, मोटे-ताजे महाशय चार हाथ का पंचा लपेटे, आधे बांह की बंडी पहरे और चश्मा डाटे काली बटलोई से मल्ल युद्ध कर रहे हैं। भाईसाहब की इच्छा हुई कि महेशजी को यहीं दरवाज़े पर रोक दें और चौंचनाथ को पहले इत्तिला करदें; परन्तु महेशजी भाईसाहब के पीछे पूंछ की तरह लगे हुए चले ही गये। नये आगन्तुक को देख कर चौंचनाथ ने यद्यपि उस बेचारी बटलोई का पीछा

तो झटपट छोड़ दिया परन्तु निर्दयी कारिख ने उनके हाथों को न छोड़ा। इस आकस्मिक साक्षात से चौंचनाथ को क्षणिक झेंप तो आई पर फिर कलेजा कड़ा कर भाईसाहब से पूछा

चौंचनाथ—भाई, आज ये तुम्हारे साथ कौन आये हैं ? इनका स्थान कहां है। इन्होंने कैसे-क्या कष्ट किया ?

भाईसाहब—ये हमारे पुराने प्रेमी हैं। आपके दर्शनों की इनकी विशेष इच्छा थी। कई बार इन्होंने आपसे मिलाने के लिये कहा परंतु अवसर न आया। आज दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इनका नाम महेश है। ये पहले नंदप्रयाग में रहते थे। अब तो यहीं उत्तरकाशी में आपकी कुटी से थोड़ी ही दूरी पर रहते हैं। आप बड़े ही विद्वान् और तपस्वी हैं।

चौंचनाथ—(महेश से) अच्छा आपके नाम से तो मैं बहुत दिनों से परिचित था। आज के दिन साक्षात का भी सौभाग्य हुआ। कहिये कैसे आना हुआ ?

महेशजी—महाराज, हम लोग कूर्माचल में निवास करते हैं। यहाँ न तो कोई उपदेशक ही कभी आता है और न किसी विद्वान के ही दर्शन होते हैं। सब लोग अविद्या अंधकार में डूबे हैं। धार्मिक, सामाजिक और आध्यात्मिक सुधारों के लिये आदर्श महापुरुषों की विशेष आवश्यकता रहती है। देश की दरिद्रता आप से छिपी नहीं है। एक ओर लोगों को भरपेट अन्न तथा पहरने को कपड़े भी नहीं मिल रहे हैं। दूसरी ओर फैशन और और फजूलखर्ची मारे डालती है। इसी से महाकष्ट हो रहा है। अतएव आपसे अर्थशास्त्र

के विषय में कुछ जानना चाहता हूं। आशा है मुझ जिज्ञासु की ज्ञान-तृषा शान्त करेंगे।

चोंचनाथ—बड़ी अच्छी बात है। मुझसे जो कुछ आप लाभ उठा सकें उसे देने में मुझे जरा भी इन्कार नहीं है। आपकी जो इच्छा हो निःसंकोच पूछिये मैं सच्चे हृदय से प्रकट करने में विलम्ब न करूँगा। पर एक बात मैं पहले साफ़ कहे देता हूं कि मैं अपना काम भी करता जाऊँगा और आपसे बातें भी।

इतना कह चोंचनाथ चौके में गये और कुछ काग़ज़ लेकर चूल्हे में रक्खे और ऊपर के ताखे से अधजली दियासलाइयाँ उतारीं तथा दोनों की सहायता से आग जलाने का उद्योग करने लगे।

महेशजी—अच्छा धन संग्रह के विषय में आपके क्या विचार हैं, स्पष्ट कहिये।

चोंचनाथ—भाई, यह प्रश्न बहुत ही गंभीर है। इसकी सतह तक पहुंचने के लिये मुझ सरीखे साधारण अर्थशास्त्री का काम नहीं है। मेरे मामाजी ने मुझे पढ़ाते समय कहा था

"पढ़ो बेटा ! चंद्रिका।
जासों चढ़ै हण्डिका॥"

और मरते समय उपदेश दे गये थे

"जहाँ टका तहँ धर्म है, जहाँ टका तहँ स्वर्ग।
टका टिकट है मुक्ति का, दिलवावै अपवर्ग॥"

फिर मेरा भी यह कथन है कि

टकाही आशिको-माशूक़ का बस एक नाता है।
टकाही शरबते—दीदार की लज्जत चखाता है॥

टकाही दिलको बहलावे, टकाही रोब गंठवावे।
टकाही ख़ुद ख़ुदा बनकर जगत में खूब पुजवावे॥
पढ़ाई हो, लिखाई हो, रुलाई, हो बधाई हो।
सगाई हो, जुदाई हो, लड़ाई, बेवफ़ाई हो॥
गरज़ दुनिया के जितने भी ये सब जंजाल फैले हैं।
टका बुनियाद है इनकी—टकेही जग में छैले हैं॥
वकालत की चमक छिपती-टका जब मुहँ छिपाता है।
तभी हक़ की कही जाती—टका जब मुहँ दिखाता है॥
लियाक़त जाग उठती है कि जब नज़राना आता है।
सुराही सर झुका देती कि जब पैमाना आता है॥

इसलिये जब वेद-पुरान भी "टका धर्म टका कर्म टका हि परमं सुखम्। जस्य गेहे टका नास्ति ....।" यही कहते हैं तो फिर इससे द्रव्य की रक्षा सर्वोपरि है। मैं तो अपनी आमदनी का सोलहवां भाग अपने शरीर के लिये खर्च करता हूं। अधिक न तो खर्च करता हूं और न खर्च के कारणों को अपने पास फटकने ही देता हूं।

महेशजी—मेरी तो कुल आमदनी महीना पूरा होने से पहले ही ख़र्च हो जाती है और आप सोलहवें भाग में अपना ख़र्च चला ले जाते हैं, यह तो आप कमाल करते हैं। भला ख़र्चे का बजट किस प्रकार बनाते हैं?

चोंचनाथ—सुनिये, पहले तो बचत की निश्चित रक़म निकाल कर अलग रख देता हूं क्योंकि मैंने इस रक़म को बचाने और उसमें से एक कौड़ी भी न छूने की कसम खाली है। चाहे बनियाँ महाजन या पावनेदार मुझे गाह चलते दिन-रात टोंका ही क्यों न करें। उनके तक़ाज़ों

की परवाह में रत्तीभर भी नहीं करता। फिर तो डेढ़ आने का आटा, दो पैसे की दाल, एक पैसे में हल्दी नमक मसाला, एक पैसे की लकड़ी, एक आने का घी; कुल साढ़े तीन आने में एक दिन के भोजन का ख़र्च चल जाता है।

महेशजी—क्या आप एक ही बार दिन में भोजन करते हैं?

चोंचनाथ—चौबीस घंटे में एक बार भोजन करता हूँ। दूसरी बार के लिए कुछ दो-चार से अधिक नहीं—फल कन्द, मूल (जैसे शकरकंद आलू आदि भून कर) रख देता हूं। जिसका ख़र्च महीने में चार-पांच आने से अधिक नहीं लगता।

महेशजी—क्या आप एक ही प्रकार का भोजन सदैव करते हैं? और इससे आपको कष्ट नहीं होता? होली, दिवाली आदि त्योहार के दिनों में भी क्या आपके भोजनों में अधिक नहीं ख़र्च होता।

चोंचनाथ—प्रायः एक ही प्रकार का भोजन सदैव करता हूं। इससे मन को प्रसन्नता और कार्य में तत्परता प्राप्त होती है। बदन में फुर्ती आती और रोग का भय नहीं रहता। हां, होली आदि बड़े त्योहारों में कुछ भोजन में परिवर्तन हो जाता है। सो भी अधिक नहीं। उस दिन भात और दाल के स्थान में शाक बना लेता हूं और इसका ध्यान रखता हूं कि ख़र्च रोज से बढ़ने न पावे।

महेशजी—दूध, चीनी, मिठाई, फल आदि का ख़र्च किस प्रकार है।

चौंचनाथ—यह ख़र्च मैं नहीं रखता। हाँ, फल कभी-कभी खाता हूं, पर वह भी बहुत कम। फलों में आम तो मैं छूता तक नहीं—उन्हें बहुत दिनों से मैंने छोड़ दिया है। जब कहीं किसी भक्त के पास गया और उसने बहुत ही आग्रह किया तो वहाँ खाने में चाहे जो कुछ खालूं नहीं तो मैं सदैव यही सादा भोजन करता हूं।

महेशजी—कपड़े आदि पहरने में तो आपको अधिक ख़र्च करना ही पड़ता होगा?

चौंचनाथ—इस उत्तरकाशी की गुफ़ाओं में रहने वाले साधु-प्रकृति को तो कपड़ों की आवश्यकता ही नहीं है। यदि कुछ है तो बहुत कम। मैं तो एक जोड़ा धोती एक साल में ख़रीदता हूं सो भी सस्ते से सस्ती। जिसमें से एक को फाड़ कर दो पंचे बना लेता हूं और एक साबित रखता हूं। एक जोड़ी कुर्ता तीन साल तक चलते हैं। गर्मी में बहुत कम कपड़ा पहरने का अवसर आता है। जाड़े में पहरना पड़ता है क्योंकि यहाँ सर्दी विशेष पड़ती है। यद्यपि कोट के बनवाने में कुछ ख़र्च अधिक पड़ता है परन्तु वे टिकाऊ बहुत होते हैं। मेरे पास दो कोट हैं जिनकी अवस्था क्रमशः सोलह और इक्कीस साल की है। कोट के बटनों को जब धोबी फोड़ देता है तब मुझे असह्य दुःख होता है।

महेशजी—क्या आप अपने शिष्यों के पास बहुधा जाते हैं।

चौंचनाथ—शिष्यों के पास तो नहीं जाता। हां, नन्दप्रयाग में एक स्नेही—शम्भू—हैं प्रायः हर दूसरे तीसरे महीने जब इधर कारखाने की ओर जाता हूं तो उनके ही यहाँ

ठहरता हूं। वहीं उनके पिता और वे मुझे बहुत आग्रह करके भाँति भाँति के भोजन करा देते हैं। उनके यहाँ की अदरख की चटनी और नींबू का आचार बहुत अच्छा रहता है जिसके कारण कभी-कभी भोजन कुछ अधिक हो जाता है, जिससे यहाँ आने पर कई दिन तक उपवास-चिकित्सा करनी पड़ती है और योग आसनों द्वारा स्वास्थ्य सुधारना पड़ता। कभी-कभी तो यह इच्छा होती है कि शम्भू के यहाँ न ठहरा करें। परन्तु एक तो उनके प्रेम भाव ने कुछ ऐसा फांसा है और दूसरे आजकल मित्र भी तो जैसे चाहिये वैसे नहीं मिलते। जिसके साथ भलाई करो वही बुराई करता है। जिसको भूंकना सिखाओ वही काटता है। इसीलिए जी नहीं चाहता कि दूसरे स्थान में ठहरूँ। इस पर मेरे कुछ दुष्ट मित्र मुझे भांति भांति के कटाक्षों से दुःखित करते हैं।

महेशजी—महाराज, आप इतने अच्छे विचारों के विद्वान तथा संयमी हैं कि आपके अनुकरण से एक तो लोक-कल्याण होता है और दूसरे चार पैसे जमा होते हैं। पर तिस पर भी लोग आपसे रुष्ट क्यों हो जाते हैं।

चोंचनाथ—रुष्ट हो जाना कोई नई बात नहीं है। महापुरुषों से लोग हमेशा से रुष्ट होते आये हैं। आजकल भारतवर्ष की गिरी दशा तो इसी लिए हुई है कि लोग महापुरुषों की कदर करना नहीं जानते। लोग स्वार्थी हैं। जो लोग मुझ से इस समय रुष्ट होकर मेरी हँसी उड़ाते हैं, मेरे न रहने पर वही हाय हाय करके रोवेंगे। महा-

पुरुष ही संसार की कायापलट करते हैं। मुझसे किसी की हानि देखी नहीं जाती। मैं जहाँ-जहाँ रहा और वहाँ के कर्मचारियों का व्यवहार देखा तो मैं ने उसके सुधार की ओर पैर बढ़ाया। फल यह हुआ कि सुधार तो दरकिनार रहा उल्टे लोग मेरे शत्रु हो गये और वे ही निन्दा करने लगे। मैंने कितनों की रोज़ी लगवाई, कितनों के पेट पलवाये पर वे ही पीछे मेरे निन्दक हुए। कामदद्त्त, रमानिवास, सरीखे निरक्षरों को कलम पकड़ना सिखाया अन्त, में उन्होंने ही मुझे बदनाम कराया। मैं कारखाने के काम में यदि अब तक बना रहता तो सब से बड़ा पद प्राप्त करता परन्तु इन लोगों ने मुझे वहाँ से उखाड़ फेंका और यहाँ इस भजन-पूजा में ला पटका। जब मैं वहाँ रहा मेरे चेले दुर्गादत्त पन्त को वह सन्मान प्राप्त हो गया। मैं भी तब से उस स्थान में रहना पसन्द नहीं करता और यहाँ इतनी दूर वास करने लगा हूं। पर यह ईर्षा मुझे रात दिन जलाया करती है। उनकी सुखसामग्री देख कर मेरे मुँह में पानी भर आता है परन्तु करूँ क्या, कुछ वश नहीं। कभी वह समय था कि सारे कारखाने में मेरी तूती बोलती थी कहाँ आज मैं विकर के पिंडा के समान अलग फेंक दिया गया। मैं कभी कभी कारखाने के हित की बात भी कहता हूं तो उलटा उत्तर मिलता है कि जो काम किया गया है सोच समझ के, तुम इसमें दखल न दो। अतएव मैं भी अब अपना समय बिता रहा हूं। कई बार मन ने चाहा कि इस भजन की बेड़ी को तोड़ दूं पर फिर भी तृष्णा नहीं

मानती। मेरे चेले समय समय पर स्थानों की खोज कर पता देते हैं परन्तु मैं तो अभी तक यहीं अटल हूं।

महेशजी—क्या आप अपनी संग्रहीत पूंजी अपने पास रखते हैं या किसी बैंक आदि में ?

चोंचनाथ—भाई पैसा बचाकर किसी काम में लगाये रहना चाहिये इससे वह बढ़ता रहता है। परन्तु लगावे सोचा समझ कर। आजकल संसार से विश्वास उठ गया है। जिसे देदो वही उसका मालिक बन बैठता है। देखो मैंने न जाने कितनी बड़ी कारस्तानी से धन बचा बचा कर जमा किया और फिर एक व्यवहारी द्वारा व्यापार में लगवा दिया। फल यह हुआ कि मूल भी गायब है। लोगों की सलाह से सौ-पचास और खर्च किये, अदालतबाजी हुई, फिर भी ढाक के तीन पात। लोगों ने "सूम-धन शैतान खाय" कहकर हँसी तो उड़ाई पर किसी ने रुपये दिलाने का यत्न न किया। इस प्रकार मैं हज़ारों के धक्के में आगया। अब जब मैं अपनी किफ़ायतशारी को सोचकर इस तरह हुये इस दुरुपयोग को देखता हूं तब महादुःख होता है। इसलिये अब तो मैंने डाकखाने की शरण ली है क्योंकि दूध का जला छाँछ भी फूँक फूँक कर पीता है। इसलिए हमारी बात मानना तो किसी का विश्वास न करना।

महेशजी—भगवन, आपके ये उपदेश मुझे अमूल्य और अद्भुत लब्ध हैं ये कभी न भूलूँगा। आज आप के दर्शनों का पूरा फल मुझे मिला। अब फिर किसी दिन सेवा में उपस्थित होऊँगा।

उन्नति का गीत

——:※:——

आज हर क़ौम है मसरूफ़ तरक्की की तरफ़।
कुर्मी औ कोरी औ कलवार सभा करते हैं॥
एक जा होके बहम जोश मोहब्बत के साथ।
पास करके रिज़ोल्युशन ये कहा करते हैं॥
हम बिरहमन थे, कोई कहता है हम थे छत्री।
जो हमें शूद्र हैं कहते वो बुरा करते हैं॥
राज अंग्रेज़ी में हम सब हैं बराबर साहब।
जो depressed हमको करते हैं वो जफ़ा करते हैं॥
हम न अब माँस ही खाते हैं और न पीते हैं शराब।
गुन करम और स्वभाव अपना बजा करते हैं॥
गिरे हम दौर ज़माना से ज़माना गुज़रा।
अब तो फ़िक्र हम लोग उठने की किया करते हैं॥
हैफ़ आता है मुझे लीडराने-चौंचों पर।
चोंच चलाने में भी आलस जो किया करते हैं॥
कुछ तो ऐसे हैं जिनको नहीं पर्वाए-क़ौम।
जाहो हशमत के समुन्दर में बसा करते हैं॥
क़ौम की चोंच हैं अपने को समझते कुछ लोग।
गालियाँ रोज सभी को वो दिया करते हैं॥
खुद तो गर्दन का हिलाना भी न मंजूर उन्हें।
Criticism करने को तैयार रहा करते हैं॥
बस इसी में वो समझते हैं फ़ज़ीलत अपनी।
लोग हँसते हैं कि ये यों ही बका करते हैं॥
उड़ न जो सकते हैं इतनी ऊँची उड़ान।

क्युनिस्पेल्टी ही में कोशिस वो किया करते हैं ॥
'होमरूल मीटिङ्ग' कहीं कर डाली जो जवानों ने ।
चौंच ये झुक के कहते—आप यह क्या करते हैं ॥
.खुद रहें काहिल और न औरों को ही करने कुछ दें ।
चौंचियत का ख़ातमा ये लोग किया करते हैं ॥

CONVOCATION में एक EXPERIENCED GRADUATE.

फिराक़े डिप्लोमा में होगये घुल घुल के वह हाथी ।
रिटायर होगये सरविस से उनके जितने थे साथी ॥
तजर्बा दर्जनों सालों का करके आई है बारी ।
दुआयें और हज़ारों मिन्नतें पूरी हुईं सारी ॥
रहमदिल हो गये सारे थे जितने मुमतहिन साहब ।
कहा मारो हटाओ पास भी कर दो इसे साहब ॥
यहाँ घर पर चढ़े विश्वनाथ जी पर पाव भर लड्डू ।
तो निकले जा कहीं हज़रत इक्केटा में ये आलबड्डू ॥
सरंगी तबला शहिनाई वा नौबत घर लगी बजने ।
पचासों रुपये घर के महीने में लगे बचने ॥
हज़ारों दोस्त वो अहबाब मिलने आते थे घर से ।
पर हज़रत यह छिपे फिरते थे दिन भर पार्लो के डर से ॥
ख़ुदा के देन से आया मुबारक कानवोकेशन ।
ख़रीदे बस गये गुदड़ी से कपड़े लसे पुरफैशन ॥
कहा यारों ने अरे म्याँ एक सवारी तो मंगा भेजो ।
यह कपड़े और दबाज़त कॉन्वोकेशन ज़रा सोचो ॥
चिल्लाये ज़ोर से एक दम बुलाया अपने ख़सू को ।
किये अहकाम जारी एक इक्के के बुलाने को ॥
कई आये, हुये वापस, दबाज़त देखकर इनकी ।

कहा कोल्हू नहीं लादा उमर इतनी सी जा गुज़री॥
ग़रज़ एक छकड़े वाला होगया राज़ी तरस खाकर।
लदे बोरी बड़ी हो मालगाड़ी के वह घनचक्कर॥
ख़ुदा की मिहरबानी से जा मक़सद पर वह पहुँचे।
औ पाया डिप्लोमा अपना चैन्सलर के दस्त अक़दस से॥
मढ़ाया डिप्लोमा चौखट में पैसे तीन आने दे।
लगाया फिर उसे घर पर सदा दीखे निकलने में॥
हुये अब ग्रेजुएट थे तो नज़र बदली ज़रा उनकी।
मंगायी एक ऐनक और फैशन की तरफ़ मुख की॥
बनाया दोस्तों ने भी खुशद कहने लगे हज़रत।
लगाओ 'बो' औ नैकटाई औ पहनो शर्टीकालर सब॥
दिलाया तार बाजों ने बेबलर एन्ड को फ़ौरन।
कि भेजो सूट मलमल का और गोटेदार हो दामन॥
उन्होंने भी समझ उल्लू दिया बस भेज एक गाउन।
मिला यारों को जो मौक़ा पिन्हा भेजा उन्हें टाउन॥
कहा यारों ने भाई दम ब दम फ़ैशन बदलता है।
जो मांगो आज कल एक सूट तो गाउन ही मिलता है॥
किसी ने कह दिया कल ही तो देखा एक साहब को।
बस बिलकुल ऐसा ही पहने हुए जाते थे आफ़िस को॥
भड़ी काफ़ी थी इतनी हो गये राज़ी पहनने को।
बनी ख़ासी हजामत चल दिये हर कूचा बनने को॥
जो देखा सूलों वाली मेम को लौंडे लपक दौड़े।
लगीं बस तालियां बजने व उड़ने जाबजा कूड़े॥
बहुत झेंपे व गुस्से में करी गाड़ी किराये की।
वह पहुंचे अपने घर लथ पथ फिर इज़्ज़त की किराये की॥
कुछ आई अक़्ल अब उनको हुये दम कहते ही मज।

बने हिन्दोस्तानी खोल के जी और तन मन धन ॥
हमारी तो दुआ है हर तरह से खुरमों .खुश हो ।
हुये बी० ए० जो अबकी तुम तो एम०-ए० भी शिताब ही हो ॥
—A. B. C.

मेरी कविता

——:०:——

लेके दीवान हाथ में इक मीर ।
कहते फिरिए कि काम शायर का ॥

मैं कवि, मेरे बाप राजकवि, मेरे दादा-पड़दादा महाकवि। कविता करना मेरा ख़ानदानी काम है। इसलिए मैं ऐसा-वैसा, ऐरा-गैरा, अधकचरा कुलेखक तो हूँ नहीं जो सोच-विचार कर कुछ लिखूं। मैं तो ठहरा सुलेखक और सुकवि, नहीं-नहीं कवीन्द्र और सुलेखकेश्वर। हिन्दी काव्य-जगत में मेरी ख़ासी घुस-पैठ है। इसके लिये काफ़ी परिश्रम कर बहुत सी ऐसी पुस्तकों का परायण किया है जिनका नाम तक भी आज कल के कवि या लेखक न जानते होंगे। गोसाईं बाबा की आल्हा रामायण और सबलसिंह कृत महाभारत तथा द्रौपदी कृत चीरहरन लीला तो मुझे इतनी पसंद है कि उसकी तारीफ़ भी नहीं हो सकती। किंगलियर का लिखा हुआ दुलभ बन्धु, पद्माकर कृत पद्मावत्, बिहारी के बिरहे और केशव के कहरवे तो मैंने कई बार शुरू से आख़ीर तक और फिर अन्त से आदि तक पढ़ डाले हैं। जिस समय मैं लिखने बैठता हूं उस समय कलम नायका और कागज़ नायक में ख़ूब ही छनती है—कभी नायक नाराज़ होता तो नायिका को तो अपने पास

फटकने भी नहीं देता और कभी अप-टू-डेट नायिका नाराज़ हो जाती तो आजकल की नायिकाओं ही के समान कागज़ नायक का सारा शरीर काट-कूट कर काले रंग में उसे रँग देती। आजकल नायिकाओं ही का ज़माना है इसीलिए इन दोनों की झपट में जीत नायिका ही की रहती थी। इन दोनों की झपट देखकर मेरा लिखना-उखना सब भूल कर दूर किनारे होजाता—मैं तो इस प्रेम-कलह ही को देखने में तल्लीन हो जाता क्योंकि कवि का हृदय ठहरा। ख़ैर, काले मुँह की लेखनी और रात-दिन की कड़ी मेहनत से सफ़ेद-पोश कागज़ पर जो लिख जाता, वह हिन्दी का परम सौभाग्य। क्योंकि मेरी तहरीर क्या होती है ख़ुदा का फरमान होता है। इसीलिए तो इस बन्दे नातवाँ ने अपनी जरा सी उम्र में जो काबलियत हासिल की है, वह किस की किस्मत में बदी थी? आधुनिक-बिहारी के नाम से हिन्दी-जगत में मेरी धाक जमी हुई है, बड़े बड़े काव्य-रत्नाकर तक भी मेरी कविता पर टीका टिप्पणी करते हैं और वह भी कुंडलिया, कवित्त आदि कविता ही में (क्या ख़ूब कविता की टीका भी कविता में!)। एक-एक दिन में बिहारी की कविता को भी मात कर देने वाले गये-गुज़रे पद्य तैयार कर देना तो इंज़ानिब के दस्ते मुबारिक का मामूली करश्मा है। बन्दे की लेखनी की द्रुतगति और इसी उम्र में यह क़द्रदानी देखकर देखनेवाले साहित्यिक-चमगादड़ और विचित्र-समालोचक जन्तुओं ने पंजाब मेल की हँसी उड़ा कर फक फक करनेवाली मोटरकार पर धूल फेंका करते हैं। मेरे इतने बड़े दिमाग़ शरीफ़ में यह बात नहीं घुसती कि कविता में छन्दों के नियम, अलंकारों का उपयोग, रसों का संचार, भावों की भरमार न हों तो क्या वह कविता ही नहीं है। फिर लोग छन्दशास्त्र, पिंगल और

अलंकार ग्रन्थों को पढ़कर क्यों अपना अनमोल समय नष्ट-भ्रष्ट किया करते हैं। मुझे तो अपनी अबतक की इस लाइफ़ (life) भर में बखुदा इन ऊल-जलूल बातों की ज़रूरत ही नहीं पड़ी। ज़रूरत क्या—मैंने आज तक इन पुस्तकों के दर्शन भूले-भटके स्वप्न में भी नहीं किये—

'काव्य-छन्द' क्या बला-न कुछ भी पढ़ा-पढ़ाया।
'अलंकार' क्या चीज़ न 'भाषा'-'भाव' सुझाया॥

कविता बनाने के इतने Rules ख़्याल रखने की मुझे भला कहाँ फ़ुरसत है? एक साहब कहा करते थे Rules are for the fools सो रूल-ऊल मैं observe नहीं करता। लेकिन मेरी कविता इतने पर भी गजब करती है। कविता की शोहरत तो यहाँ तक बढ़ गई है कि साधरण कोटि के आदमी तो क्या बड़े बड़े साहित्य-महारथी और साहित्य-संहारक भी उसकी मुक्तकंठ से प्रशंसा ही नहीं करते बल्कि एक एक पद्य को Analysis कर बड़े बड़े अख़बारों में टीका-टिप्पणी कर उसे दाद देते हैं। फिर न जाने लोग आजकल क्यों कहा करते हैं कि—आजकल की कविता पहले सी नहीं होती। हो कहाँ से? मेरे सिवा किसी दूसरे कवि में स्वच्छन्दता तो हई नहीं, सब के पैर बँधे हैं। बिचारे चौकड़ी भरें तो कैसे भरें और फिर कोई अच्छी कविता करे तो कहाँ से। कविता करना कुछ सहल बात नहीं है। इसके लिए तो मैं ही माई का लाल हूँ। दिल थाम और होश संभाल कर जब मैं खड़ी बोली और अंग्रेजी-संस्कृत-उर्दू मिली भाषा-एकता की इन पंक्तियों को "पंचम-स्वर औ गर्दभ-स्वर का लेकर आश्रय ख़ूब" पढ़ता हूँ तो लोगों के वाह वाह के पुल बाँधने में जबड़े उखड़ जाते हैं और लोग मुझे सातवें आसमान पर बिठा देते हैं—

गदहे घोड़े भी अपनी भाषा में गाते।
वे निकृष्ट जो इसको तजते जाते॥

❀ ❀ ❀ ❀

हेच पैंगज़ाइटीज़ न कर्तव्यम्,
कर्तव्यम ज़िकरे ख़ुदा।
ख़ुदा ताला प्रसादेन,
सर्व कार्यम् फ़तह शवद॥

पर अब तो हिन्दीवालों को अतुकान्त blank verse लिखने की सूझी है। पर मैं तो उनसे भी एक क़दम और आगे बढ़ गया हूँ। मुझे restrictions नापसन्द हैं।

इन ऊल-जलूल रूलों से बचने के लिए ही मैंने 'चौंच छन्द' उपनाम रबड़ छन्द की ईजाद की है। जिसमें कविता की घोड़ी खुली लगाम बड़ी आज़ादी से और बिना अगाड़ी पिछाड़ी के हिनहिनाती रहती है। और जिसमें—

बुरी-भली कैसी ही हो, पर 'शैली' नूतन।
'सुरुचि' 'ओज' 'लालित्य' आदि का ढंग भी नूतन॥

ये छन्द रबड़ की तरह elastic हैं। किसी भी रूल की पाबन्दी करने की ज़रूरत नहीं। जो कुछ आप लिखें वही कविता है। एक नमूना देता हूं। ये मेरा नहीं है। अगर अपना बनाया नमूना देता तो आप कह देते कि इसका क्या ठिकाना। यह एक बड़े भारी कवि का है। pure student language में है:—

एग्ज़ामिनेशन में फेल होने पर।
करस्पोन्डेन्सी समाचार पत्रों में करते हैं सब॥
जब छापता नहीं एडीटर उस को बुरा समझ कर।
तब आप जाते हैं बन एडीटर फ़ौरन॥

नौकरी गवरमेन्ट देती नहीं अब।
भक्त देश के होकर पोलिटिकल सोचने लगे मामले ॥
देश औ क़ौम के उद्धार का कोई काम निकाल कर।
फ़रड चन्दा का हजम जा करते हैं ॥

देखा आपने—कविता लिखना कितना सहल कर दिया गया है। यही सबब है कि जिसे देखिये वही आज कविता कर रहा है। अब भी जो अपने को कवि न बना सके और मुशाअरों और अख़बारों में अपना नाम न रोशन करे उसकी ख़ैरियत चोंच भगवान के ही हाथ है। उन्हें कविता की पुस्तकों से literature भर देना चाहिये उनका principle तो यही होना चाहिये कि :—

'Tis pleasant, sure, to see one's name in print,
A book's a book, although there's nothing in't.

अब आपको मेरी Biography सुनने की इच्छा बड़ी ही बलवती हो रही होगी। इसलिए भविष्य के कवियों को पथ प्रदर्शक का काम देने के लिए मैं अपने आत्मचरित का प्रारंभिक अंश सुनाता हूं। ध्यान देकर सुनिए।

पैदा होने के पहले ही मैं कवि हो गया था, और इस वजह से मुझे फ़ख़ हासिल है कि मैं pre-born poet हूं। मुझे पिता पुत्रकवि कहकर सम्बोधन करते थे। फिर भला मेरी poetry का पूछना क्या है ? जब मैं बच्चा था तब poetry ही में रोया करता था—कभी बेसुरा नहीं हुआ।

मेरे पड़ोस से अलग एक ऐसे स्थान में जहाँ केवल एक ही घर था एक लेखक-शिरोमणि, भारत-मार्तण्ड, कविता-

दशानन, हिन्दी-कविता कामिनी-शृंगार-संहारक, रस-केसरी (कवि-सम्मेलन में जिन को देखते ही लोग चल देते थे और कविता सुन्दरी तो इनके पहुंचते ही घिघियाती हुई भाग खड़ी होती थी) महाशय रहते थे । इनकी कुटी के इर्द-गिर्द विस्तृत मैदान में हरे-भरे खेत खूब लहलहाते थे जिनमें वे अपनी अक्ल और काव्य, रस, पिंगलादि चौपायों को जब तब चरने के लिए हाँक देते थे । ये महल्ले के किनारे इसलिए रहते थे कि बुद्धिमान और विद्वान लोग एकान्त ही में रहते हैं ताकि उनके कानों को मुहल्ले का शोरगुल खराब कर बहरा न बना दे । इन कवि शिरोमणिजी के प्रोसेसन की तैयारी का वर्णन इस प्रकार सुनाई पड़ता था—

सिर पर गाँधी टोपी धर कर ढीला कुरता डाँट,
लाल तिलक माथे पर दे कर कमरी से तन पाट ।
पाद-कमल पनही धारण कर ले कर दण्ड महान,
देवी का निर्मल प्रसाद पा और दूधिया छान ।
ब्रह्मा की प्यारी तंबाकू झोंकी मुँह भरपूर,
कविता-भक्त शिरोमणि जी अब हो तरंग में चूर ।
किसी लाल के पास चले फिर रूपचन्द के काज,
जहाँ निकलते कहते सब जन "पाँय लगी कविराज ।"
ठोक पीट कवि श्रेष्ट महोदय देते आशिर्वाद,
'फूलो फलो' 'जियो' फैलाओ जगमें कविता-वाद ॥

यही पंडितजी मुझे बचपन से बताते रहते थे कि—यदि मनुष्य लेख लिखना या कविता करना सीख ले तो फिर चाँदी ही चाँदी है। जिधर भी निकल जायगा गहरी रकम हाथ लगेगी, साथ ही नाम भी खूब पैदा होगा क्योंकि "समरा लेखक,

कविन की; नहिं करि सकत नरेश।" पंडितजी की ये बातें मेरे कंठ के नीचे उतर गईं। बस फिर तो और भी जोर से कविता का कचूमर निकालने लगा।

जब कुछ बड़ा हुआ तब मोहल्ले के लड़कों के साथ खेलता था। उस वक्त भी poetry का जनून सिर पर सवार था। मेरे साथियों में शुक्राचार्य नाम का बड़ा डाह रखने वाला साथी था। वह यह नहीं चाहता था कि उससे अधिक विद्या, बुद्धि, धन या किसी भी बात में कोई बढ़ जाय। जब वह किसी की बढ़ती देखता तो उसकी नानी मर जाती और छाती पर साँप लोट जाता था। क्या करे बिचारे का चारा नहीं चलता था, नहीं तो ऐसे लोगों को वह नेस्त नाबूद ही कर डालता। लोग जो कहते हैं कि "सौ में सूर सहस में काना, सवा लाख में ऐंचा ताना। ऐंचा ताना कीन्ह पुकार, कंजा से रहिए होशियार" सो ये हजरत मेरी कविता करने की रुचि पर डाह करने लगे। अपने को दाग़ और ग़ालिब का बराबर और हाली का शागिर्द ही लगाते थे। मुझे चिढ़ाने के लिए एक दिन कह बैठे—

"शायरी मर चुकी अब जिन्दा न होगी यारो।
याद करके उसे जी न कुढ़ाना हर्गिज़॥

तुम्हारे जैसे चोंचू लोगों को कविता करना न आवेगा क्योंकि तू रसिक मनुष्य नहीं है और मुर्दा दिलों से कविता का पुस्तैनी बैर है। कवि को तो ऐसे जिन्दे स्वभाव का होना चाहिये कि जिसके शृंगार रस वर्णन करते ही मुर्दा दिल भी फड़क उठे, काम और रति की नंगी तस्वीर सामने नाचने लगे और लज्जा कोसों दूर भाग खड़ी हो।"

मेरे तलवे से आग सुलग उठी। जी में आया कि मरदूद को दो-चार हाथ लगाऊँ पर ज़रा अपनी उम्र में बड़ा समझ कर मन ही मन लोहू का घूंट सा पीकर बोला—

"क्यों भाई, शायरी अगर मर चुकी है, तो आजकल इतने कवि जो मेढ़क से दिखाई पड़ रहे हैं वे क्या घास खोदते हैं, कविता नहीं करते हैं? क्या उनकी और उनकी कविता की बड़ाई नहीं होती?"

एकाध भाई बोल उठे—

सूर सूर तुलसी शशी, उडुगन केशवदास।
अब के कवि खद्योतसम, जहँ-तहँ करत प्रकाश॥

मैंने सोचा कि अच्छे कामों में सदा विघ्न पड़ा ही करता है। इन हज़रत के स्वभाव में डाह करना तो ब्रह्मा ने बाँट ही दिया है। फिर एक यह मेरे ही सिर मुड़ाते ओले नहीं पड़े हैं बल्कि अच्छाई की राह में सदा से काँटे बिछते ही आये हैं। इसलिए सीधा उत्तर दिया—नहीं यार, तुम क्या तुम्हारे पुरखा या ख़ुद ब्रह्माबाबा भी ऊपर से उतर कर मुझको बहकावें तो भी मैं बिना कवि बने न मानूँगा। बात तो बुरी ज़रूर लगी होगी क्योंकि फिर हज़रत चुपचाप यह कहते राह पकड़ी कि ख़ैर, मेरी नहीं सुनते तो कम से कम कोई एक गुरू तो अवश्य ही बना लो नहीं तो कोरे गदहे ही रह जाओगे—

बिना गुरू के जगत में, होता कभी न ज्ञान।
बैल चले रथ में तभी; हाँके जब रथवान॥

अन्तिम बात तो मेरे जँच गई। मेरे मुहल्ले वाले कविचक्र-चूड़ामणिजी भी कहा करते थे कि बिना गुरू के इल्म नहीं आता। फ़ौरन निश्चय किया कि किसी सुलेखक या कवि की शागिर्दी कर

कविता करने का मन्त्र लेना चाहिये। ज्यादा सिरपच्ची करने की जरूरत न पड़ी। महल्ले वाले कवि शिरोमणि को ही गुरू बनाना पक्का किया और उन्हीं का शागिर्द बन कविता करना सीखने लगा। एक दिन संसकीरत के श्लोक बनाने की सूझी। एक लड़के को पीट डाला। फिर पिटाई का description यों किया

लात घूँसा कमर मध्ये चनकटा मुख भंजनम्।
राम सोटा सीस मध्ये बार बार धड़ा धड़म्॥

मैंने अपने गुरू को अपनी यह नई रचना सुनाई, सुनते ही वे बोल उठे—"धन्य है। तुम हरिश्चन्द्र के भी हरिश्चन्द्र हो आओगे।" मैंने भी कहा, "आप ऐसा गुरु पाकर तो मुझे कालिदास ही होना चाहिये।"

फिर साहब, लोगों को जो एक झक सवार हुई, तो मुझे एक स्कूल में भर्ती करा दिया। मास्टर साहब कहते 'यह लड़का बड़ा intelligent है।' मैं कहता 'जी हाँ मेरी क़द्र तो आप ही ने जानी है।' फिर कहते 'लेकिन कभी पढ़ता लिखता नहीं—बड़ा शरारती है।' यह सुनते ही मैं सिर हिला देता। आखिरकार मास्टर साहब ने अपने उसी पुराने हथियार की याद की यानी बेंत मँगाया। सच जानिये मुझे originality बहुत पसन्द है। जो चीज़ सदियों से काम में आरही है उसको बार बार काम में लाना लकीर के फ़कीर बने रहना है। यह कम्बख़्त बेत न मालूम कब इस्तेमाल में आया (मैं उस research scholar को एक gold medal दूंगा जो इस important field को जोतेगा) पर वही बेत बराबर मास्टर लोग काम में लारहे हैं। अरे भई, कुछ नई ईजाद करो। अगर दिमाग़ में originality नहीं है तो पीटना छोड़ दो। पर

मास्टर साहब कहते--मेरा बेत है और तू है। पर उनके बेत से यहां क्या होना जाना था, कितने ही बेत मेरे ऊपर टूट गये। मैंने अपना मोटो बना लिया—

चपत हमैं चम्पा सम लागो, घूँसा फूल हजारा है।
लात खात मुँह बात न बोलैं, अटल मौन बिस्तारा है॥
धम धम धम दस पाँच लगैं जब, अरुई गदा प्रहारा है।
चलैं पैग भरि हम तब कबहूँ, अस सहनशील हम धारा है॥

मास्टर साहब आखिर हार गये। एक दिन मुझ से बोले "बस जा एक कोने बैठ, अब मैं तुझसे बात न करूँगा, चाहे पढ़, चाहे न पढ़।" अन्धा क्या चाहे, दो आँखें। जो चाहता था वही पाया, मौज उड़ाने लगा। पर छमाही इम्तहान आगया। मेरे एक मिर्जापूर के दोस्त थे। वे मेरी ही तरह कवि थे (मुझ से अच्छे हर्गिज़ न थे) एण्ट्रैंस का इम्तहान देने गये थे, यह उनकी तारीफ़ थी कि बिना एक लोटा चढ़ाये इम्तहान में जाते न थे, हिन्दी का पेपर कर रहे थे। इतने ही में सूझा कि एग्जामिनर ज़रूर ही कविताप्रेमी होगा। बस अपने पेपर में कजलियाँ लिख डालीं। पर मैंने सोचा छिः चार पाँच पेज लिखने की क्या ज़रूरत है। Byron तो एक लाइन लिख देने से इम्तहान में first हुआ। पर मैं तो golden mean अख़्त्यार करूँगा मैं दो लाइन लिख दूँगा।

किसी न किसी तरह अंग्रेजी का इम्तहान हो गया। अरिथमेटिक से पिण्ड छुटा लिया। हिन्दी की भी चिन्दी उड़ा दी। पर हिस्टरी जागरफ़ी के दिन बड़ी मुसीबत में पड़ा। रात भर खुटिया में चोटी बांधकर और आंखें धो-धोकर पढ़ता रहा, पर दोनों ने क़सम कर लिया कि हर्गिज़

मेरे ज़हन नशीन न होंगी । मैं इम्तहान में गया, एग्ज़ामि-नर थे बाबू चुकचमप्रसाद । उनकी कविता अख़बारों में छपती थी । और स्कूल वाले उन्हें शायर कहा करते थे । जब पर्चा आया तब मालूम हुआ कि कुछ याद नहीं । मैंने भी कहा हिस्टरी है बड़ी वाहियात चीज़ । भला गड़े मुर्दे उखाड़ने से क्या फ़ायदा और ख़ास कर उस हालत में जब वे उखड़ना ही न चाहें । बस मैंने कापी में बड़े फ़ख्र के साथ मोती ऐसे हरूफों में लिख दिया :—

हज़ारों की किस्मत तेरे हाथ है ।
मुझे पास कर दे तो क्या बात है ॥

मैंने सोचा कि मास्टर साहब यह कविता देखते ही ख़ुश हो जायँगे और अगर पचास में पचास नम्बर न देंगे तो ४९ में कोई शक नहीं ।

पर जब कापी मिली तब जो disappointment हुआ-उसका हाल न पूछिए । कापी पर एक बड़ा भारी लड्डू बना था । भीतर जो देखा तो मेरे couplet के नीचे लिखा था :-

किताबों की कुंजी तेरे पास थी ।
अगर याद करता तो क्या बात थी ॥

बस यह पढ़ते ही फ़ेल होने का मेरा ग़म जाता रहा चट से मैंने उसी के नीचे लिख दिया ।

हिस्टरी जागरफ़ी बड़ी बेवफ़ा ।
रात भर घोटी सबेरे सफ़ा ॥

हुज़ूर—मेरा कसूर कुछ नहीं ।

इस तरह मेरा poetry का development हुआ ।

आजकल की विद्यार्थी--अवस्था

बी० ए० विद्यार्थी—

झट कर प्यारी समय निकलता, रोक नहीं मुझको बेकार।
साढ़े दस से पौने ग्यारह, क्या होगा बारह भी पार॥

स्त्री—

एक ओर है बोझ गृहस्थी, एक ओर पुस्तक का भार।
भूखे लड़के दिन भर रोते, मैं भी रहती ढाढ़स मार॥
क्यों फिर बोझ उठाया घर का, था किस बल पै तब विश्वास।
पढ़ना ही था पहले तुमको, करते बी० ए० सुख से पास॥

बी० ए० विद्यार्थी—

प्यारी ! तू यह क्या समझे, डिगरी का क्या है सार।
हे बैरिस्टर बनने पहले, धन बरसेगा तेरे द्वार॥

स्त्री—

चूल्हा परे कलक्टर बाबा, कहाँ आज क्या करूँ उपाय।
तेल नहीं है, दाल नहीं है, देखो बच्चे रोते हाय॥
तुम भी उल्टा डाँट बताते, करूँ न भोजन जो तैयार।
धोती भी तो फटी हमारी, कैसे फूटे भाग्य हमार॥

बी० ए० विद्यार्थी—

जाने दे तू कालेज मुझको, करती क्यों इतना तकरार।
देखूँगा मैं विश्वकोष में, कैसे फूटे भाग्य तुम्हार॥

प्रकाशकाचार्य

साहित्य-क्षेत्र का कुशल शिल्पकारी हूं।
लेखक-समाज का निश्चय दुःखहारी हूं॥
मेरे ही बलपर लेखक गण जीते हैं।
पाकर मुझसे धन शांति-सुधा पीते हैं॥
मैं तड़क भड़क से शान जमाये रहता।
लेखक-समाज को सदा फंसाये रहता॥
सिर मार-मार कर पुस्तक वे लिखते हैं।
लाकर उसको मेरे अर्पण करते हैं॥
मैं बात बनाकर उन्हें ठगा करता हूं।
सच पूछो तो मैं नित्य दगा करता हूं॥
जब हस्तलेख कोई लेखक लाता है।
मेरे सन्मुख आ निज दुखड़ा गाता है॥
'पुस्तक पढ़कर तब वैसा उत्तर दूंगा।
अच्छी होने पर मैं समुचित ज़र दूंगा॥'
यों कहकर उसको कई दिनों तक टालूं।
यों छल प्रपंच से अपनी बात बनालूं॥
पुस्तक अच्छी हो फ़ौरन नकल करालूं।
या कोरा उत्तर देकर उसको टालूं॥
मैं इस प्रकार से उसे मूड़ लेता हूं।
पुस्तक छपवाकर स्वयं माल लेता हूं॥
मैं हस्तलेख का उलट फेर करवाता।
पीछे पुस्तक अपने नामों छपवाता॥
दो चार वाक्य भी शुद्ध न लिखना आता।
साहित्य-महारथियों का भी शासक बनजाता॥

साहित्य क्षेत्र का सच्चा मार्ग न पाऊँ ।
पुस्तक सम्पादन हेत बड़ा मुँह बाऊँ ॥
मैंने हिन्दी को किया भाल की बिन्दी ।
मेरे बिन उसकी उड़ती थी नित चिन्दी ॥
पहले तो मैंने तोता-मैना बेचा ।
कजरी ठुमरी अरु इश्कहज़ारा बेचा ॥
सो धाक जमा हुआ मैं नृपति प्रकाशक गनका ।
आनन्द भोगने लगा, किया निज मनका ॥
मोटर पर चढ़कर मोद चैन करता हूं ।
बस बन प्रकाशकाचार्य चैन करता हूं ॥
मैं भाँति भाँति से सदा जाल फैलाता ।
लेखक लोगों को नित भरमाता ॥
मीठे वचन सुनाय कपट छल से टका कमाऊँ ।
सबके आगे मै अपना* ही गुण गाऊँ ॥
जो कुछ इधर उधर से पाता ।
मजमून उड़ा लेखक बन जाता ॥
यों बेंच-बांच कर नॉवल किस्सा ।
लेखक लोगों को देकर घिस्सा ॥
दिन फिरे भाग्य खोटा भी चेता ।
हुआ सब से बढ़कर विक्रेता ॥
खोली दुकान पुस्तक की भारी ।
जहँ मिलें किताबें दुनियाँ भर की सारी ॥
लेखकसमाज को लालच में फांसा ।
दो चार मास रख बाद बताऊं झांसा ॥
प्रेसों से भी खूब किताबें छपवाईं ।
पर घर से कभी न दीन्हीं पाईं ॥

समालोचक

—:०:—

मैं फेल हूं 'मिडिल' पर बी० ए० के कान काटूँ ।
ऐसा सपूत हूं मैं, अब्बा को घर के डाटूँ ॥
बन करके साँप काला, लेखक को काट खाऊँ ।
गुरुजी की खोपड़ी पर, सोंटे सदा जमाऊँ ॥
बेढब वकील साहब, चूहे न क्यों कहाएँ ।
मैं तर्कशास्त्री हूं, कवि क्यों न हार जाएँ ?
विद्या की नाक लम्बी, उस्ताद का चिकारा ।
हूं लालटेन घर की, साहित्य का सितारा ॥
खाता हराम का हूं, मैं घूस खोर पक्का ।
आंखों की किरकिरी हूं बाजार का उचक्का ॥
मित्रों की मण्डली में, आराध्यदेव मैं हूं ।
मुझको न आम समझो, काबुल का सेव मैं हूं ॥
कल-कल के छोकड़े जो, मेरी करेंगे पूजा ।
उनसा न और कोई, होगा हकीम दूजा ॥
जिसको कहो पछाडूँ रुस्तम का बन अखाड़ा ।
मुझको रहे मुबारक मेरा कलम कुल्हाड़ा ॥

जैन्टिलमैन

—:०:—

(१)

कोटं च पाटलुं चैव शुसं शिरूट लाम्बुतम् ।
ईस्बूट समायुक्तो जैन्टलमैनस्स कथ्यते ॥

(२)

नेकटाइन्कोलरश्चैव मस्तके जुल्फरेवच ।
अक्षीणि आईग्लासश्च जैन्टलमेनस्स उच्यते ॥

(३)

हृदयोपरिवाचश्च चर्मणाबध्यतेकरे ।
कट्यादीस्कन्धचर्मैव जैन्टलमेनस्सकीर्तितः ॥

(४)

सिगारेटश्च चीरूटं गडाउ चीभरस्तथा ।
हाकाबीड़ी धूम्रपानं तमाखु चाधनं तथाः ।
मुखेधार्यमाणश्च जैन्टलमेनस्स ईरितः ॥

(५)

कोटान्तरे स्थितं चर्म तत्केपं शिरसोपरि ।
अम्ब्रेला स्टीक करे युक्तः जैन्टलमेनस्स उच्यते ॥

(६)

प्रीतिभोजनभक्षी च वर्णाश्रमविघातकः ।
पुनर्विवाह कर्त्ता च जैन्टलमेनस्सवैस्मृतः ॥

(७)

स्वस्त्री करोति सेकहैन्डं स्थित्वापरनरैः सह ।
तद्दृष्ट्वाऽति प्रसन्नः स्यात् जैन्टलमेन उदीरितः ॥

(८)

आंग्लभाषायुता लेडी पोषणार्थं पतिं सदा ।
लाँड गेहं गताऽसाध्वी जैन्टलमेनस्स कथ्यते ॥

(९)

हावभाव युता लेडी बूटचश्मेन संयुता ।
तस्याश्चकरसंयुक्तो जैन्टलमेनः प्रशस्यते ॥

लीडरी का नुसखा।

—:o:—

ख़ुदगर्ज़ी के बीज—	२ तोला
अदावत का मग़ज़—	३ "
बुरी नीयत की गुठली—	४ "
धोखे-धड़ी की छाल—	१५ "
रिशवत का पानी—	१५ "
अधिकार के धौंस की गोली—	६ "
द्वेष के फूल—	५ "
दग़ाबाज़ी के फूल	४ "
बेईमानी का अर्क	२ "
ख़ुशामद का शरबत	११ "
अभिमान की जड़	१४ "
बड़बड़ाहट की बूँटी	२१ "

तरकीब दवा खाने की

ऊपर लिखी तमाम दवाइयों को बेहयाई की तराज़ू में तोल कर झूठ की खरल में डालकर बेख़बरी के सोटे से जब तक पोल ढके तबतक रगड़ता जाये, पश्चात् पार्टीबंदी की चलनी में छान कर फूट की हाँड़ी में डाल दे। लालच के चूल्हे पर चढ़ाकर अविश्वास की आग झोंक दे। जब खूब पक जावे तब कृतघ्नता की शक्कर डालकर बेइज्जती के चम्चे से अपने हलक में उतार जायें। अगर इसी प्रकार, जबतक लोगों की आँख न खुले, तब तक खाया करे, तो बहुत जल्द देश-प्रेम, जाति-प्रेम, समाज सेवा आदि के तमाम विचारों को ईमान सहित दूरकर दुम दबाकर

यह बीमारी भाग जायेगी। फिर बिलकुल निडर होकर उसके इस्तेमाल करनेवाले अपनी टांगें पसारकर जनता की आँखों में धूल डाल सकेंगे और मूछें मरोड़कर लोगों के माल पर गुलछर्रे उड़ाकर तथा लम्बी-लम्बी बातें बघारकर दूसरों के सिर बुराई व बदनीयती मढ़कर खुद दूध से धोए तो नामी लीडर बन सकेंगे।

परहेज़

ईमान सचाई, देशप्रेम, बन्धुभाव तथा जाति की भलाई से सख़्त परहेज़ रखें, वरना सारा स्वास्थ्य भंग के अखाड़े में विलीन हो जायेगा और लीडर-नाम-धारी आपकी दुम इन्साफ और न्याय की सभा में बैठकर झड़ जायेगी। बाद में कोरी पूँछ लगाकर आपको कोई कुछ कह बैठे, तो शिकायत न करें, परहेज़ न करने से बीमारी अधिक बढ़ जाने की सम्भावना है। ख़याल रहे, कि यह नुसखा देहली के चाँदनी चौक के सुप्रसिद्ध हकीम जी ने अपनी हिकमत की किताबों से उद्धृत किया है और यह इतना दुष्प्राप्य है कि प्रसिद्ध वैद्यों के यहां भी नहीं मिल सकेगा। इसलिये नीचे लिखे पते से मंगाइयेगा।

मिलने का पता—

हुज़ूर-खुशामदचन्द एन्ड सन्स

हरामज़ादा मुहाल, बेईमान गली कृतघ्नपुर।

हाकी देवी स्तोत्रम्

हाकी (Hockey) देवि नमस्तुभ्यं यमराजस्य सिस्टर (Sister) ।
यमराजो हरते प्राणान् त्वमानन्दं ददासि बट् (but) !! १ !!
ब्रह्म विष्णु महेशैस्त्वं प्रेजवर्दी (Praise worthy) महीतले ।
अस्माकं पूजनीयासि सेवनीयसि आलवेज (always) !! २ !!
महिमानन्ते गायाम इण्डिया (India) वासिनो वयम् ।
छात्रा आङ्गल भाषाया अध्येतारो विशेषतः !! ३ !!
तवैव कृपया मातर्गेमफीसं च दद्महे ।
कुर्महेटुअरं (tour) चैव सुहेल्थं (health) चलभामहे !! ४ !!
पश्यामो विविध स्थानानि कुर्मोप्लेयं (play) नित्यशः ।
लमनेडं(lemonade)स्वीटमीटं(sweet meat)भक्षयामः सुप्रेमतः !५!
सोडावाटर फ्रूटानि (Fruit) लभ्यन्ते इजिली (easily) सदा ।
येषाञ्च टेष्टमात्रे [taste] प्राप्यतेऽमरावतीसुखम् !! ६ !!
अन्यच्च कथयामः किंसुखमाराधने तव ।
प्लेयरा [players] यदि कुप्येयुस्तदा च का गतिर्भवेत् !! ७ !!
हाथं पैरं दंताश्च टूटन्ते हसुली तथा ।
नेत्रं च फूटते सम्यक् तथा च फटते शिरः !! ८ !!
फटन्ते च तथा कर्णा अङ्ग-भङ्गो भवेन्नरः ।
धन्यासि देव्यचिन्त्यासि वर्णयितुं कः शक्नुयात् !! ९ !!
नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं नमोनमः ।
वन्दामहेऽत्र रेफरीं[Referee]ह्विस्लं[whistle]बालं[ball]तथैव च १०
अध्यापकाय गेमस्य [game] कप्तानाय [captain] नमोनमः ।
साइकलपरि सवारो तुभ्यं कुर्मो नमोनमः !! ११ !!